[2023] 7 एससीआर 719

संतोश @ भूरे

बनाम

राज्य (रा.रा.क्षे.) दिल्ली सरकार

(आपराधिक अपील सं. 575/2011)

28 अप्रैल, 2023

[न्या. संजय किशन कौल, न्या. मनोज मिश्रा

और न्या. अरविंद कुमार]

दंड संहिता, 1860 - धारा 303 सहपठित धारा 34 - के तहत बरी किया जाना - अभियोजन मामला कि 'एस' अभि.सा.-3 के स्वामित्व वाली इमारत की दूसरी मंजिल पर एक अपार्टमेंट का किरायेदार था - 12.09.2000, को, सुबह लगभग 10.40 पर, पुलिस को जानकारी दी गई थी कि उस अपार्टमेंट में एक शव पड़ा है - अभियोजन पक्ष के अनुसार, पुलिस हिरासत के दौरान दो अभियुक्तों ('एस' और 'एन') में से प्रत्येक द्वारा दो प्रकटीकरण/इकबालिया बयान दिए गए थे - निचली अदालत ने कहा कि सिद्ध परिस्थितियों ने एक श्रृंखला का गठन किया जो निर्णायक रूप से संकेत देती है कि सह-अभियुक्त 'एन' के साथ आरोपी 'एस' ने अपराध किया और सबूतों को हटाने के लिए खंजर और खून से सने कपड़ों को छिपाया और आगे, पुलिस को धोखा देने के लिए, ***'एन'*** *ने एक आत्महत्या का पत्र लिखा और मृत द्वारा पहनी गई पतलून की जेब में रख दिया - दोनों अभियुक्तों को धारा 302 सहपठित धारा 34 के तहत दोषी ठहराया गया - उच्च न्यायालय ने 'एन' को बरी कर दिया, हालांकि, 'एस' की दोषसिद्धि को बरकरार रखा गया - अपील पर, अभिनिर्धारित किया गयाः केवल 'एस' के पास अपार्टमेंट का किरायेदारी होना उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि किसी संपत्ति के मालिक/किरायेदार के खिलाफ उसके अपराध के संबंध में कोई सामान्य धारणा नहीं है यदि उसकी संपत्ति में हत्या की चोटों के साथ एक शव*

पाया जाता है - अभियोजन पक्ष कोई सबूत देने में विफल रहा कि दोनों आरोपी, या उनमें से कोई भी, वहां या आसपास मौजूद थे - आरोपी 'एन' की लिखावट की पहचान करने वाला या यह खुलासा करते हुए कि आरोपी ने उसकी उपस्थिति में आत्महत्या पत्र लिखा था कोई गवाह का बयान नहीं है -आत्महत्या पत्र की सामग्री की प्रासंगिकता को समझाने के लिए भी कोई सबूत नहीं है - आत्महत्या पत्र एक व्यक्ति 'सी' का संकेत देता है - इस तरह का आरोप क्यों लगाया गया था; क्या यह किसी अन्य घटना को सोचकर था, इस पर अभियोजन साक्ष्य चुप है - विशेषज्ञ रिपोर्ट को छोड़कर, अभियोजन पक्ष की कहानी को यह आश्वासन देने के लिए कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य मौजूद नहीं है कि आत्महत्या का पत्र 'एन' द्वारा लिखा गया था - *जहां तक 'एस' की निशानदेही पर कपड़ों की बरामदगी का संबंध है, उस बरामदगी का एक गवाह अभि.सा.4, पक्षद्रोही घोषित किया जा चुका है - इस प्रकार किसी भी सार्वजनिक गवाह से उस बरामदगी का कोई समर्थन नहीं है - यह परिस्थिति कि मृतक के एक ही समूह का रक्त कपड़ों पर था निरर्थक हो गई है क्योंकि कपड़ों को दोनों अभियुक्तों के साथ जोड़ने के लिए कोई स्वीकार्य सबूत नहीं है - जहां तक 'एन' के संदर्भ में चाकू की बरामदगी का संबंध है, 'एन' द्वारा इसका खंडन किया गया है और इसका समर्थन करने के लिए कोई स्वतंत्र गवाह नहीं है - इसका दोषारोपण मूल्य बेहद सीमित है क्योंकि, सबसे पहले, चाकू को अपराध से जोड़ने वाला कोई फोरेंसिक सबूत नहीं है; दूसरा, चाकू एक सामान्य चाकू है जो आसानी से उपलब्ध हो सकता है; तीसरा, मृतक के शरीर पर पाए गए घाव विभिन्न मापों के थे जो एक से अधिक हथियार के उपयोग की संभावना को जन्म देने वाला है; और चौथा, बरामदगी की संपूर्ण कवायद विश्वास नहीं जगाती है, विशेषकर क्योंकि बरामदगी का पहला प्रयास विफल हो गया था - इसलिए, अभियोजन पक्ष फंसाने वाली परिस्थितियों की एक श्रृंखला को साबित करने में विफल रहा है जिससे निर्णायक रूप से यह इंगित किया जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह दोनों आरोपी या उनमें से कोई एक था, और कोई और नहीं था, जिसने हत्या की थी।*

साक्ष्य - परिस्थितिजन्य साक्ष्य - उन साक्ष्यों के बल पर दोषसिद्धि जो परिस्थितिजन्य प्रकृति के हैं - स्थापित कानूनी स्थिति - जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए - साथ ही, परिस्थितियां निश्चित रूप से अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करने

वाली एक निश्चित प्रवृत्ति की होनी चाहिए - इसके अलावा, संचयी रूप से ली गई परिस्थितियों को इस हद तक एक श्रृंखला बनानी चाहिए जो इस निष्कर्ष से बच नहीं सकती है कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था और परिस्थितियां केवल अभियुक्त के अपराध के बारे में परिकल्पना के अनुरूप होनी चाहिए और इसे साबित किए जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभव परिकल्पना को बाहर करना चाहिए - जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उनका अर्थ पूरी तरह से स्थापित होना चाहिए, जिसका अर्थ है कि उन्हें 'अनिवार्य रूप से' या 'अवश्य ही' और न कि 'संभवतः' स्थापित होना चाहिए क्योंकि अदालत को आपराधिक न्यायशास्त्र के सबसे मौलिक सिद्धांत की अनदेखी नहीं करनी चाहिए, जो यह है कि आरोपी को 'अनिवार्य रूप से' और न केवल 'संभवतः' दोषी होना चाहिए, इससे पहले कि न्यायालय उसकी दोषसिद्धि के लिए आगे बढ़े।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 106 - इसके अधीन अभियुक्त पर साक्ष्य का दायित्व है - कानूनी स्थिति - यह स्थापित है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 अभियोजन पक्ष को अभियोजन मामले को उचित संदेह से परे साबित करने के अपने प्राथमिक दायित्व का निर्वहन करने से मुक्त नहीं करता है - यह केवल तभी होता है जब अभियोजन पक्ष साक्ष्य देता है, जिस पर यदि विश्वास किया जाता है, तो यह एक दोषसिद्धि बनाए रखता है, या जो एक प्रथमदृष्टया मामला बनाता है, तो सवाल उन तथ्यों पर विचार करने के लिए उत्पन्न होता है जिनके साक्ष्य का दायित्व आरोपी पर होगा।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 311-क - उसमें मौजूद कानून और इसका संभावित प्रयोग - 23.06.2006 से प्रभावी 2005 के अधिनियम सं. 25 द्वारा, धारा 311-क को संहिता में जोड़ा गया है, जिससे प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट को किसी भी व्यक्ति को, जिसमें एक अभियुक्त भी शामिल है, जांच के उद्देश्यों के लिए नमूना हस्ताक्षर या लिखावट देने का निर्देश देने का अधिकार दिया गया है, लेकिन इस प्रावधान का वर्तमान मामले पर कोई असर नहीं होगा क्योंकि यह वर्ष 2000 का है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 73 - दायरा - धारा 73 के प्रावधान तब लागू होते हैं जब किसी न्यायालय में जांच या विचारण जैसी कोई कार्यवाही लंबित होती है - वर्तमान मामले में चूंकि जब प्रश्नगत नमूने प्राप्त किए गए थे, तब किसी

भी न्यायालय के समक्ष कोई कार्यवाही लंबित नहीं थी इसलिए धारा 73 के प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता था।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 45 - हस्तलेखन विशेषज्ञ - ग्राह्ययता - दायरा - किसी दस्तावेज़ के लेखन के संबंध में निष्कर्ष को केवल एक हस्तलेखन विशेषज्ञ की राय पर आधारित करना अनुज्ञेय नहीं है, लेकिन विवेक के नियम के रूप में, हस्तलेखन की पहचान के विज्ञान की अपूर्ण प्रकृति और इसकी स्वीकृत दोषपूर्णता के कारण, ऐसी राय पर सावधानी के साथ भरोसा किया जाना चाहिए और इसे तभी प्रतिग्रहण करना किया जा सकता है यदि, अपने स्वयं के मूल्यांकन पर, न्यायालय संतुष्ट है कि विचाराधीन दस्तावेज़ से संबंधित आंतरिक और बाहरी साक्ष्य विशेषज्ञ की राय का समर्थन करता है और उसकी राय को स्वीकार करना सुरक्षित है।

अपीलों का निपटान करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया :- <u>परिस्थिति - वह अपार्टमेंट जहाँ से शव मिला था, वह किरायेदारी और आरोपी 'एस' के कब्जे में था।</u>

1. अभियोजन पक्ष कुछ परिस्थितियों पर भरोसा करके आरोपी पर लगाए गए आरोप को सिद्ध करने का प्रयास करता है। कब परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर कानूनी रूप से दोषसिद्धि को बरकरार रखा जा सकता है, इस हेतु कानून अच्छी तरह से तय है - जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में, पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए; इन परिस्थितियों में एक निश्चित प्रवृत्ति होनी चाहिए जो आरोपी के अपराध की ओर इशारा करती हो; संचयी रूप से ली गई परिस्थितियों को इस हद तक पूरी तरह से एक श्रृंखला बनानी चाहिए कि इस निष्कर्ष से बचा न जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था; परिस्थितियों को केवल अभियुक्त के अपराध के बारे में परिकल्पना के अनुरूप होना चाहिए; और उन्हें साबित होने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभव परिकल्पना को बाहर करना चाहिए। इसके अलावा, जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, वे पूरी तरह से स्थापित होनी चाहिए, जिससे अर्थ है कि उन्हें 'अनिवार्य ही' या 'अवश्य ही' स्थापित होना चाहिए और न कि उनके स्थापित होने की 'संभावना हो'। एक न्यायालय को आपराधिक न्यायशास्त्र के सबसे मौलिक सिद्धांत से अनजान नहीं होना चाहिए, जो यह है कि

आरोपी को 'अनिवार्य रूप से' और न केवल 'संभावित रूप से' दोषी होना चाहिए, इससे पहले कि न्यायालय उसे दोषी ठहराने के लिए आगे बढ़े। *शिवाजी, सहबराव बोबड़े और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य* में, इस न्यायालय ने उपरोक्त सिद्धांत पर विस्तार से टिप्पणी करते हुए कहा कि 'हो सकता है' और 'अनिवार्य रूप से होने' के बीच की मानसिक दूरी लंबी है और अस्पष्ट अनुमानों को निश्चित निष्कर्षों से विभाजित करती है। [अनुच्छेद 23, 24] [739-छ-ज; 740-क-घ]

2. *शिवाजी चिंताप्पा पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य* में, यह कहा गया कि आईईए, 1872 की धारा 106 सीधे तौर पर एक ही छत के नीचे रहने वाले पति या पत्नी और मृतक के साथ देखा गया अंतिम व्यक्ति होने के खिलाफ काम नहीं करती है। यह कहा गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 अभियोजन पक्ष को उचित संदेह से परे अभियोजन पक्ष के मामले को साबित करने के अपने प्राथमिक दायित्व का निर्वहन करने से मुक्त नहीं करती है। यह केवल तभी होता है जब अभियोजन पक्ष ने ऐसे साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं, जिन पर यदि विश्वास किया जाता है, तो दोषसिद्धि को बनाए रखा जा सकता है, या जो प्रथम दृष्टया मामला बनता है, कि उन तथ्यों पर विचार करने का सवाल उठता है जिनके साक्ष्य का दायित्व आरोपी पर होगा। [अनुचछेद 32] [744-ग-घ]

3. न्यायालय का विचार है कि हालांकि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में सफल रहा है कि जिस अपार्टमेंट में मृतक का शव पाया गया था, वह 'एस' की किरायेदारी में था, लेकिन यह कोई साक्ष्य देने में विफल रहा कि दोनों आरोपी, या उनमें से कोई भी, या तो 11-09-2000 को या उसके बाद किसी भी समय, शव की बरामदगी तक वहां या आसपास मौजूद था। दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष हत्या के संभावित समय के आसपास आरोपी की उपस्थिति दिखाने में बुरी तरह विफल रहा। इसके अलावा, अभियोजन पक्ष ने यह स्थापित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया कि संबंधित अपार्टमेंट ताला और चाबी या 'एस' या 'एन' के विशेष नियंत्रण में था। यहां तक कि उस अपार्टमेंट पर 'एस' के विशेष कब्जे के सिद्धांत को अभि.सा. 4 के इस बयान से झटका लगता है कि घटना से एक हफ्ते पहले तक 'एचआर' 'एस' के साथ उस अपार्टमेंट में रहता था। अभियोजन पक्ष के पास यह दिखाने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं है कि संबंधित अपार्टमेंट में 'एस' के लिए एक अलग सीढ़ी थी जिस तक पहुंच उसके अलावा और किसी को नहीं थी। उपरोक्त सभी कारणों के लिए, हालांकि

हम मानते हैं कि संबंधित अपार्टमेंट की किरायेदारी 'एस' के पास साबित हुई थी, लेकिन न तो उस अपार्टमेंट में उसकी और न ही 'एन' की उपस्थिति, प्रासंगिक समय के आसपास, किसी भी साक्ष्य से साबित होती है। यह भी साबित नहीं हुआ है कि 'एस' उस अपार्टमेंट के अनन्य कब्जे या नियंत्रण में था। बल्कि, अभि.सा. 4 की गवाही से ऐसा प्रतीत होता है कि 'एचआर' 'एस' के साथ वहां रह रहा था, हालांकि, वह घटना से एक सप्ताह पहले वहां से चला गया था। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं है कि मृतक 'एचओ' के जाने के बाद वहां आया था या पहले से वहां रह रहा था। वास्तव में इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है - (क) कि मृतक उस अपार्टमेंट में कब आया था और (ख) वह किस हक से वहां रह रहा था। ऊपर की चर्चा और मामले के तथ्यों के प्रकाश में, हमारे विचार से, 'एस' को दिए गए अपार्टमेंट में शव की उपस्थिति ऐसी ठोस परिस्थिति नहीं है, जो आईईए, 1872 की धारा 106 की सहायता से 'एस' की दोषसिद्धि को बनाए रख सके, यह समझाने की जिम्मेदारी उस पर डाल दे कि किन परिस्थितियों में कई चोटों के साथ शव वहां पाया गया। [अनुच्छेद 36] [746-ग-ज]

<u>परिस्थिति -मृत्यु का कारण और हत्या का स्थान</u>

4. जहां तक हरि शंकर की मौत हत्या होने और धारदार हथियार से लगी कई चोटों के कारण होने का सवाल है, निचले न्यायालयों के निष्कर्षों को कोई गंभीर चुनौती नहीं दी गई है। इस खोज को कोई चुनौती नहीं है कि अपार्टमेंट से रक्त आदि उठाया गया था, जिससे पुष्टि होती है कि हत्या वहां हुई थी। हालांकि, उस अपार्टमेंट से खून या खून से सनी चारपाई/चादर के अलावा व्हिस्की की बोतल, नमकीन स्नैक्स के खाली पैकेट/पाउच, सिगरेट के बट आदि उठाए गए थे, लेकिन उन वस्तुओं को दोनों आरोपियों में से किसी के साथ जोड़ने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है ताकि उनकी उपस्थिति की पुष्टि की जा सके और संबंधित समय पर किसी अन्य व्यक्ति की उपस्थिति से इनकार किया जा सके। [अनुच्छेद 37] [747-क-ग]

<u>परिस्थिति - बरामद आत्महत्या पत्र 'एन' के लेखन में है</u>

5. इस मामले में 'एन' की लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने जांच एजेंसी ने जांच के दौरान हासिल किए थे जब संहिता में ऐसे नमूने प्राप्त करने की प्रक्रिया को विनियमित करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान मौजूद नहीं था और ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो जांच एजेंसी को किसी अभियुक्त या संदिग्ध की लिखावट/हस्ताक्षर के

नमूने प्राप्त करने से रोकता हो। जहां तक आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों का संबंध है, वे तब लागू होते हैं जब जांच या विचारण जैसी कार्यवाही न्यायालय में लंबित होती है। चूंकि जब नमूने प्राप्त किए गए थे तब किसी भी न्यायालय के समक्ष कोई कार्यवाही लंबित नहीं थी, इसलिए आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता था। ऐसी स्थिति में, चूंकि किसी जांच एजेंसी को किसी संदिग्ध या अभियुक्त की लिखावट/हस्ताक्षर के नमूने प्राप्त करने से रोकने के लिए कोई कानूनी प्रावधान मौजूद नहीं था, इस न्यायालय के विचार में, जांच एजेंसी के पास नमूना हस्तलेखन/हस्ताक्षर सहित ऐसी सामग्री एकत्र करने की शक्ति थी जिससे अभियोजन पक्ष को प्रासंगिक तथ्य पेश करने या किसी प्रासंगिक तथ्य/मामले में तथ्य पर साक्ष्य के किसी टुकड़े की पुष्टि करने में सहायता मिल सके। उपरोक्त कारणों के लिए, इस न्यायालय के विचार में, जांच एजेंसी द्वारा जांच के दौरान प्राप्त विशेषज्ञ रिपोर्ट (यानी एफएसएल रिपोर्ट), जो जांच के दौरान प्राप्त 'एन' की लिखावट/हस्ताक्षर के नमूनों पर आधारित है, को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता था क्योंकि इसे जांच के दौरान प्राप्त किया गया था और आईईए, 1872 की धारा 73 के तहत विचार किए गए न्यायालय के आदेश / अनुमति के बिना प्राप्त किया गया था। [अनुच्छेद 51] [752-ङ-छ; 753-क-ख]

6. इस मामले में अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के अनुसार जांच के दौरान 'एन' के नमूना हस्ताक्षर और लिखावट प्राप्त की गई थी। नमूनों सहित उनके संबंध में फर्द/दस्तावेज प्रस्तुत किए गए, सिद्ध किए गए और प्रदर्शित किए गए, जिससे यह साबित होता है कि उन्हें उचित रूप से रखा गया था और विशेषज्ञ राय प्राप्त करने के लिए विवादित आत्महत्या पत्र के साथ एफएसएल को भेज दिया गया था। 'एन' द्वारा उन नमूनों की वास्तविकता पर सवाल नहीं उठाया गया है। एकमात्र बचाव यह है कि लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने मजबूरी में प्राप्त किए गए थे। जैसा कि इस न्यायालय ने पहले ही पाया है कि इस तरह की आपत्ति अस्थिर थी, इसलिए, एक बार नमूनों की वास्तविकता विवादित नहीं थी, नमूने तुलना के लिए उपलब्ध थे और विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए सही तरीके से उपयोग किए गए थे। ऐसे परिदृश्य में, शुद्ध परिणाम यह होगा कि एफएसएल रिपोर्ट, जो संहिता की धारा 293 में निर्दिष्ट एक सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ द्वारा प्रदान की गई थी, इस तथ्य की परवाह किए बिना स्वीकार्य थी कि विशेषज्ञ से गवाह के रूप में पूछताछ नहीं की

गई थी। इससे भी अधिक, जब बचाव पक्ष ने विशेषज्ञ को जिरह के लिए बुलाने के लिए कोई आवेदन दायर नहीं किया हो। नतीजतन, एफएसएल रिपोर्ट के अस्वीकार्य होने के संबंध में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष गलत है और तदनुसार, इसे रद्द किया जाता है। [अनुच्छेद 59] [756-ग-च]

<u>क्या एफ.एस.एल. रिपोर्ट अपने आप में यह मानने के लिए पर्याप्त थी कि आत्महत्या पत्र 'एन' द्वारा लिखा गया था।</u>

7. यद्यपि किसी दस्तावेज के लेखन के संबंध में किसी निष्कर्ष को केवल हस्तलिपि विशेषज्ञ की राय पर आधारित करना अनुचित नहीं है, लेकिन, विवेक के एक नियम के रूप में, लिखावट की पहचान के विज्ञान की अपूर्ण प्रकृति और इसकी स्वीकृत पतनशीलता के कारण, इस तरह की राय पर सावधानी के साथ भरोसा किया जाना चाहिए और इस स्वीकार किया जा सकता है, यदि अपने स्वयं के आकलन पर, न्यायालय संतुष्ट है कि विचाराधीन दस्तावेज़ से संबंधित आंतरिक और बाहरी साक्ष्य विशेषज्ञ की राय का समर्थन करते हैं और उसकी राय को स्वीकार करना सुरक्षित है। इस मामले में, आत्महत्या के पत्र के लेखन के संबंध में, विचारण न्यायालय ने हालांकि पूरी तरह से विशेषज्ञ रिपोर्ट पर भरोसा करके अभियोजन पक्ष के पक्ष में एक निष्कर्ष दिया, लेकिन स्वीकार किए गए और विवादित लेखन के संबंध में अपनी टिप्पणियों के संबंध में अपनी संतुष्टि दर्ज नहीं की। इसने यह भी जांच नहीं की कि क्या मामले के सिद्ध तथ्यों और परिस्थितियों में विशेषज्ञ रिपोर्ट पर भरोसा करना सुरक्षित होगा। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि आईईए, 1872 की धारा 73 एक न्यायालय को न्यायालय में मौजूद किसी व्यक्ति द्वारा लिखे गए शब्दों या आंकड़ों की तुलना ऐसे व्यक्ति द्वारा कथित रूप से लिखे गए किसी भी शब्द या आंकड़े से करने में सक्षम बनाती है। इसलिए विचारण न्यायालय इस तरह की कवायद कर सकता था। लेकिन, इस मामले में, विचारण न्यायालय द्वारा ऐसी कोई कवायद नहीं की गई है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस मामले में आरोपी 'एन' की लिखावट की पहचान करने वाला कोई गवाह का बयान नहीं है या यह प्रकटीकरण नहीं किया गया है कि 'एन' ने उसकी उपस्थिति में आत्महत्या का पत्र लिखा था। आत्महत्या के पत्र की सामग्री की प्रासंगिकता को समझाने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं है। दिलचस्प बात यह है कि आत्महत्या के पत्र में एक 'सी' को दोषी ठहराया गया है। इस तरह के आरोप क्यों लगाए गए थे; चाहे यह किसी अन्य घटना के संदर्भ में हो,

अभियोजन पक्ष के साक्ष्य इस पर चुप हैं। इसके अलावा, यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि जांच अधिकारी ने मृतक की लिखावट से परिचित व्यक्ति(ओं) से पूछताछ की ताकि इस संभावना को खारिज किया जा सके कि आत्महत्या का पत्र मृतक के लेखन में था। आरोपी द्वारा हत्या को छिपाने के लिए लिखे जा रहे आत्महत्या के पत्र की अभियोजन की कहानी को आश्वासन देने के लिए इस तरह की कवायद आवश्यक थी, क्योंकि, पहली बात, स्पष्ट रूप से मौत आत्मघाती नहीं थी, और, दूसरी बात, यह किसी अन्य घटना के चिंतन में लिखे जाने की संभावना से इनकार कर सकती थी। इस संदर्भ में देखा जाए तो विशेषज्ञ रिपोर्ट को छोड़कर, अभियोजन पक्ष की कहानी को यह आश्वासन देने के लिए कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य मौजूद नहीं है कि आत्महत्या का पत्र आरोपी 'एन' द्वारा लिखा गया था। [अनुच्छेद 65, 66] [759-छ-ज; 760-क-छ]

8. उपरोक्त के अलावा, यह स्वीकार करना काफी मुश्किल लगता है कि 'एन' ने मृतक द्वारा पहनी गई पतलून की जेब में अपने द्वारा लिखा गया एक आत्महत्या पत्र क्यों छोड़ा, खासकर, जब एक आम आदमी की दृष्टि से भी चोटें हत्या से संबंधित थीं। विशेष रूप से, मृतक के शरीर पर आठ मृत्यु पूर्व चोटें पाई गईं। [अनुच्छेद 67] [760-छ-ज]

9. इस बात को ध्यान में रखते हुए कि 'एन' ने आत्महत्या पत्र लिखने की फंसाने वाली परिस्थिति से इनकार किया है और कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य नहीं है, विशेषज्ञ रिपोर्ट को छोड़कर, जो 'एन' द्वारा आत्महत्या पत्र लिखने का समर्थन करती है, इस न्यायालय का विचार है कि हालांकि विशेषज्ञ साक्ष्य आत्महत्या पत्र में लिखे गए लेख पर एक राय के रूप में स्वीकार्य थे, लेकिन, अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्यों के समग्र मूल्यांकन पर, केवल इसके आधार पर, यह कहना बेहद असुरक्षित होगा कि मृतक की पतलून से प्राप्त आत्महत्या का पत्र 'एन' द्वारा लिखा गया था। [अनुच्छेद 69] [762-ख-ग]

<u>परिस्थिति - 12.09.2000 से 23.09.2000 तक दोनों अभियुक्तों का पता नहीं चल सका था।</u>

7. इन परिस्थितियों में और उपरोक्त सभी कारणों से, इन न्यायालय को आत्मसमर्पण के उनके कार्य में कुछ दिनों की देरी के कारण दोनों अभियुक्तों के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने का कोई अच्छा कारण नहीं मिलता है। **[अनुच्छेद 70] [763-ङ-च]**

<u>परिस्थितियाँ- प्रकटीकरण बयान, परिणामी खोज और अपराध के साथ उनका जुड़ाव।</u>

8. जहां तक 'एस' की निशानदेही पर कपड़ों की बरामदगी का संबंध है, उस बरामदगी के गवाह अभि.सा. 4 को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है। इस प्रकार किसी भी सार्वजनिक गवाह से उस बरामदगी के लिए कोई समर्थन नहीं है। और चूंकि इस न्यायालय ने पहले ही पुलिस गवाहों द्वारा दिए गए प्रकटीकरण बयानों पर संदेह किया है, इसलिए उनके द्वारा बरामद की गई बरामदगी के संबंध में उनकी गवाही पर भरोसा करना असुरक्षित होगा, विशेष रूप से, जब जिस स्थान से कपड़ों की बरामदगी दिखाई गई है, वह इमारत की छत के अलावा और कोई नहीं है जहां से 13 दिन पहले मृतक का शव मिला था। क्योंकि, ऐसे परिदृश्य में, यह उम्मीद करना तर्कसंगत होगा कि पुलिस ने उस इमारत के किसी भी नुक्कड़ और कोने को बिना जांच किए नहीं छोड़ा होगा। उपरोक्त सभी कारणों से, हम 'एस' के कहने पर कपड़ों की बरामदगी पर संदेह करते हैं और इस तरह उसके कहने पर कपड़ों की बरामदगी की स्थिति को खारिज करते हैं। यह परिस्थिति कि कपड़ों में मृतक के समान समूह का खून था, अर्थहीन हो जाती है क्योंकि कपड़ों को दोनों आरोपियों के साथ जोड़ने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है। जहां तक 'एन' की निशानदेही पर चाकू बरामद होने की बात है, 'एन' ने इससे इनकार किया है और इसका समर्थन करने के लिए कोई स्वतंत्र गवाह नहीं है, जहां तक अभि.सा. 13 का संबंधि है, जिसे सार्वजनिक गवाह के रूप में पेश किया गया है, वह एक विशेष पुलिस अधिकारी निकला। अन्यथा भी, इसका अपराध में फंसाने हेतु मूल्य बेहद सीमित है क्योंकि, सबसे पहले, अपराध के साथ चाकू को जोड़ने वाला कोई फोरेंसिक साक्ष्य नहीं है; दूसरे, चाकू एक आम चाकू है जो आसानी से उपलब्ध हो सकता है; तीसरा, मृतक के शरीर पर पाए गए घाव अलग-अलग आयामों के थे जो एक से अधिक हथियारों के उपयोग की संभावना को जन्म देते थे; और चौथी बात यह है कि बरामदगी की पूरी कवायद हमारे आत्मविश्वास को प्रेरित नहीं करती है, विशेष रूप से, क्योंकि बरामदगी करने का पहला प्रयास विफल हो गया था। उपरोक्त सभी कारणों के लिए, हम मानते हैं कि प्रकटीकरण बयान देने और उसकी परिणामी खोजों / बरामदगी के संबंध में परिस्थितियां उचित संदेह से परे साबित नहीं हुई थीं। [अनुच्छेद 75,76,81,82] [766-ख-ङ; 768-ज; 769-क-ग]

9. उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि अभियोजन पक्ष फंसाने वाली परिस्थितियों की एक श्रृंखला को साबित करने में विफल रहा है जिससे निर्णायक रूप से यह इंगित किया जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह दोनों आरोपी या उनमें से कोई एक था, और कोई और नहीं था, जिसने हत्या की थी। [अनुच्छेद 86] [771-ग-घ]

सुखविंदर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य **(1994) 5 एस.सी.सी 152 : [1994] 3 एससीआर 1061;** *देवी लाल बनाम राजस्थान राज्य* **(2019) 19 एस.सी.सी. 447;** *शंभू नाथ मेहरा बनाम अजमेर राज्य* **ए.आई.आर. 1956 एस.सी. 404 : [1956] एस.सी.आर 199;** *नागेंद्र साह बनाम बिहार राज्य* **(2021) 10 एस.सी.सी. 725;** *शिवाजी चिंतप्पा पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य* **(2021) 5 एस.सी.सी. 626;** *बॉम्बे राज्य बनाम काठी कालू ओगढ़* **ए.आई.आर.1961 एस.सी 1808 : [1962] एस.सी.आर 10;** *सेल्वी और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य* **(2010) 7 एस.सी.सी 263 : [2010] 5 एस.सी.आर 381;** *महाराष्ट्र राज्य बनाम सुखदेव सिंह और एक अन्य* **(1992) 3 एस.सी.सी 700 : [1992] 3 एस.सी. आर 480;** *राम नारायण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* **(1973) 2 एस.सी.सी. 86 : [1973] 3 एससीआर 91;** *फखरुद्दीन बनाम मध्य प्रदेश राज्य* **ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 1326;** *लक्ष्मण सिंह और अन्य बनाम राज्य* **(1952) 1 एस.सी.सी. 362:1952 एससीसी ऑनलाइन एससी 30 : ए.आई.आर. 1952 एससी 167: [1952] एससीआर 839;** के. चिन्नास्वामी रेड्डी बनाम ए.पी. राज्य और एक अन्य **ए.आई.आर. 1962 एस.सी. 1788 : [1963] एससीआर 412;** *मोहम्मद. इनायतुल्ला बनाम महाराष्ट्र राज्य* **(1976) 1 एस.सी.सी 828 : [1976] 1 एस.सी.आर 715 - पर भरोसा किया गया।**

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम राम बाबू मिश्रा **(1980) 2 एस.सी.सी 343 : ए.आई.आर. 1980 एस.सी 791 : [1980] 2 एस.सी.आर 1067;** *मालती साहू बनाम राहुल और एक अन्य* **(2022) 10 एस.सी.सी. 226;** *शरद बर्धीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य* **(1984) 4 एस.सी.सी 116 : [1985] 1 एस.सी.आर 88;** *शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य* **(1973) 2 एस.सी.सी 793 : [1974] 1 एस.सी.आर 489;** *सुख राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य* **(2016) 14 एस.सी.सी 183 : [2016] 3 एस.सी.आर 254;** *आशीष जैन बनाम मकरंद सिंह और अन्य* **(2019) 3 एस.सी.सी 770 : [2019] 1 एससीआर 345;** *सोनवीर उर्फ सोमवीर बनाम राज्य*

(रा.रा.क्षे दिल्ली) **(2018) 8 एस.सी.सी. 24 : [2018] 7 एस.सी.आर 830;** *उ.प्र. राज्य बनाम सुनील* **(2017) 14 स.सी.सी 516;** *रितेश सिन्हा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य* **(2013) 2 एस.सी.सी. 357 : [2012] 11 एस.सी.आर 683;** *राज्य (रा.रा.क्षे दिल्ली) बनाम नवजोत संधू* **(2005) 11 एस.सी.सी 600 : [2005] 2 पूरक। एस.सी.आर 79;** *मात्रू उर्फ गिरीश चंद्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* **(1971) 2 एस.सी.सी 75 : [1971] 3 एससीआर 914;** *पुलुकुरी कोट्टाया और अन्य बनाम सम्राट* **ए.आई.आर. 1947 पी.सी. 67 - पर भरोसा किया गया।**

<u>निर्णय विधि संदर्भ</u>

[1994] 3 एससीआर 1061	**अनुच्छेद 8**	**पर भरोसा किया है**
[1980] 2 एससीआर 1067	**अनुच्छेद 8**	**संदर्भित है**
[1962] एससीआर 10	**अनुच्छेद 17**	**पर भरोसा किया है**
[1985] 1 एससीआर 88	**अनुच्छेद 23**	**संदर्भित है**
[1974] 1 एससीआर 489	**अनुच्छेद 24**	**संदर्भित है**
[1956] एससीआर 199	**अनुच्छेद 30**	**पर भरोसा किया है**
[2016] 3 एससीआर 254	**अनुच्छेद 49**	**संदर्भित है**
[2019] 1 एससीआर 345	**अनुच्छेद 49**	**संदर्भित है**
[2018] 7 एससीआर 830	**अनुच्छेद 49**	**संदर्भित है**
[2010] 5 एससीआर 381	**अनुच्छेद 55**	**पर भरोसा किया है**
[2012] 11 एससीआर 683	**अनुच्छेद 56**	**संदर्भित है**
[2005] 2 सप.एससीआर 79	**अनुच्छेद 56**	**संदर्भित है**
[1992] 3 एससीआर 480	**अनुच्छेद 62**	**पर भरोसा किया है**
[1973] 3 एससीआर 91	**अनुच्छेद 63**	**पर भरोसा किया है**
[1971] 3 एससीआर 914	**अनुच्छेद 70**	**संदर्भित है**
[1952] एससीआर 839	**अनुच्छेद 73**	**पर भरोसा किया है**
[1963] एससीआर 412	**अनुच्छेद 78**	**पर भरोसा किया है**
[1976] 1 एससीआर 715	**अनुच्छेद 79**	**पर भरोसा किया है**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील सं. 575/2011|

आपराधिक अपील सं. 682/2008 में दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांक 05.03.2009 के निर्णय और आदेश से।

सह

आपराधिक अपील सं. 576/2011।

जयंत के. सूद, ए.एस.जी., रणजी थॉमस, वरिष्ठ अधिवक्ता., श्रीकांत नीलप्पा तेरदल, सुश्री निधि, सार्थक अरोड़ा, मोहित गिरधर, प्रमोद दयाल, निकुंज दयाल, राकेश कुमार, निशेष शर्मा, अक्षित प्रधान, अनिरुद्ध शर्मा, भुवन मिश्रा, बी. के. सतीजा, सुश्री किरण सूरी, कार्तिक जसरा, जी. एस. मक्कर, उपस्थित पक्षकारों के लिए अधिवक्तागण।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था :-

न्या. मनोज मिश्रा,

1. दिल्ली उच्च न्यायालय (संक्षेप में उच्च न्यायालय) के 5 मार्च, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध दो संबंधित अपीलों अर्थात आपराधिक अपील संख्या 682/2008 और 316/2008 में दायर इन दो अपीलों पर एक समान निर्णय द्वारा निर्णय लिया जा रहा है।

2. दो व्यक्ति, अर्थात् संतोष @ भूरे (आपराधिक अपील संख्या 575/2011 में अपीलकर्ता) और नीरज (आपराधिक अपील संख्या 576/2011 में प्रत्यर्थी) पर भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "भा.दं.सं.") की धारा 302 सहपठित धारा 34 और 120-ख तहत दंडनीय अपराधों के लिए मुकदमा चलाया गया था। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, रोहिणी न्यायालय, दिल्ली (संक्षेप में विचारण न्यायालय) ने दिनांक 27-02-2008 के आदेश द्वारा उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी पाया और दिनांक 29-02-2008 के आदेश के तहत उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई। हालांकि, उन्हें आपराधिक साजिश के अपराध के लिए दोषी नहीं पाया गया था। इससे व्यथित होकर, उच्च न्यायालय के समक्ष दो अलग-अलग अपीलें नामतः आपराधिक अपील संख्या 316/2008 और 682/2008 दायर की गई थीं। नीरज द्वारा दायर आपराधिक अपील संख्या 316/2008 को अनुमति दे दी गई, जिससे उसे हत्या के आरोप से बरी कर दिया गया, जबकि संतोष @ भूरे द्वारा दायर आपराधिक अपील संख्या 682/2008 को खारिज कर दिया गया।

3. नीरज को बरी किए जाने से व्यथित, दिल्ली राज्य ने आपराधिक अपील संख्या 576/2011 को दायर किया है, जबकि उसकी अपील खारिज होने से व्यथित संतोष @ भूरे ने आपराधिक अपील संख्या 575/2011 दायर की है।

<u>परिचयात्मक तथ्य</u>

4. (i) संक्षेप में अभियोजन पक्ष की कहानी यह है कि संतोष @ भूरे रमेश चंद (अभि.सा. 3) के स्वामित्व वाली इमारत की दूसरी मंजिल पर एक अपार्टमेंट का किरायेदार था। दिनांक 12-09-2000 को लगभग सुबह 10:40 बजे पुलिस को सूचना दी गई कि उस अपार्टमेंट में एक शव पड़ा हुआ है। सूचना मिलने पर पुलिस टीम ने घटनास्थल का दौरा किया, और पाया कि एक व्यक्ति एक फोल्डिंग चारपाई पर मृत पड़ा था और पूरे फर्श के साथ चारपाई/ पलंग की चादर पर भी खून बिखरा हुआ था। वहां मिली पलंग की चादर, खून, जले हुए सिगरेट के टुकड़े, माचिस, नमकीन स्नैक्स मिश्रण के खाली पैकेट, व्हिस्की की बोतल, प्लेट आदि को पुलिस ने उठाकर जब्त कर लिया। इसके अलावा मृतक की पैंट की जेब से एक आत्महत्या का पत्र भी मिला। उसको भी जब्त किया गया था। घटनास्थल पर शव की पहचान नहीं हो सकी। हालांकि, बाद में, भगवान दास (अभि.सा. 26) ने इसे हरि शंकर के रूप में पहचाना। दिनांक 13.09.2000 को मृतक के भाई शिव शंकर (अभि.सा.23) मृतक की पत्नी श्रीमती वंदना (अभि.सा.9) और मृतक का ब्रदर-इन-लॉ अजय कुमार (अभि.सा.18) सूचना मिलने पर पहुंचे और पुष्टि की कि शव हरि शंकर का है। जांच के दौरान इमारत के मालिक रमेश चंद (अभि.सा. 3) ने प्रकटीकरण किया कि संतोष @ भूरे उसका किरायेदार था और उस अपार्टमेंट में रहने वाला था और 11.09.2000 को शाम लगभग 4.00 बजे, संतोष को उसके हाथ में एक *गठड़ी* (कपड़े से बना थैला) के साथ परिसर से बाहर जाते हुए देखा गया था। पहली मंजिल के किरायेदार राज कुमार (अभि.सा. 4) ने जांच के दौरान कहा कि संतोष @ भूरे उस अपार्टमेंट में हरि ओम नाम के एक व्यक्ति के साथ रहता था, जो घटना से एक सप्ताह पहले चला गया था, और 11.09.2000 को लगभग 9.00 बजे, उसने मृतक को उस अपार्टमेंट में संतोष और नीरज के साथ ताश खेलते और शराब पीते हुए देखा था।

(ii) 20.09.2000 को पुलिस दल ने संतोष @ भूरे के पैतृक स्थान इटावा का दौरा किया, लेकिन वह वहां नहीं मिला। तथापि, आरोपी व्यक्तियों ने 23-09-2000 को तीस हजारी स्थित संबंधित न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। उनके आत्मसमर्पण की सूचना मिलने पर, पुलिस ने उनकी हिरासत के लिए एक आवेदन दिया और दोनों आरोपियों की तीन दिन की पुलिस हिरासत प्राप्त की।

(iii) अभियोजन पक्ष के अनुसार पुलिस हिरासत के दौरान दोनों आरोपियों में से प्रत्येक द्वारा दो प्रकटीकरण/इकबालिया बयान दिए गए; पहला, दिनांक 23.09.2000 का, जिसके परिणामस्वरूप कोई खोज नहीं हुई, जबकि दूसरा, दिनांक 25.09.2000, के परिणामस्वरूप नीरज की निशानदेही पर एक चाकू/खंजर और संतोष @ भूरे की निशानदेही पर खून से सने कपड़े बरामद किए गए, जिनमें मृतक के समान समूह का रक्त था।

(iv) इस प्रकार एकत्र की गई सामग्री के आधार पर, दोनों आरोपियों के खिलाफ आरोप-पत्र दायर किया गया था। पुलिस की रिपोर्ट पर संज्ञान लेने के बाद मामला सत्र न्यायालय में ले जाया गया। न्यायालय ने उन पर भा.दं.सं. की धारा 302/34 और 120-ख के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप लगाए।

(v) विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष के 29 गवाहों का परीक्षण हुआ और वस्तुओं की जब्ती, फोरेंसिक रिपोर्ट, ऑटोप्सी रिपोर्ट आदि के संबंध में विभिन्न दस्तावेज प्रस्तुत और प्रदर्शित किए गए।

(vi) चूंकि हत्या का कोई प्रत्यक्षदर्शी मौजूद नहीं था, इसलिए अभियोजन पक्ष ने विचारण न्यायालय के निर्णय के अनुच्छेद 49 में उल्लिखित परिस्थितियों पर भरोसा किया, जो नीचे उद्धरित है :-

> "49. .....
>
> i. जेजे कॉलोनी, ख्याला के मकान नंबर डी-156 की दूसरी मंजिल पर आरोपी संतोष @ भूरे की किरायेदारी और आवास;
>
> ii. हरिओम का किराये के परिसर में आरोपी संतोष @ भूरे के साथ रहना और घटना से लगभग एक सप्ताह पहले परिसर छोड़ना;
>
> iii. आरोपी संतोष @ भूरे के आवास पर मृतक हरि शंकर की उपस्थिति;

iv. मकान नंबर डी-156, जेजे कॉलोनी, ख्याला की दूसरी मंजिल से हरि शंकर का शव बरामद होना और उसकी शिनाख्त;

v. मृतक द्वारा पहनी गई पैंट की जेब से प्र.अभि.सा.15/जी पत्र की बरामदगी और उसकी जब्ती;

vi. अपराध स्थल से प्रदर्शों की जब्ती;

vii. मृतक के शरीर का पोस्टमार्टम और रिपोर्ट;

viii. आरोपी संतोष @ भूरे और नीरज की गिरफ्तारी;

ix. आरोपी व्यक्तियों के प्रकटीकरण बयान और उनकी निशानदेही पर प्रदर्शों की बरामदगी;

x. आरोपी नीरज के लिखावट और हस्ताक्षर का नमूना और पत्र, प्र.अभि.सा. 15/जी और आरोपी के लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने को एफएसएल के हस्तलिपि विशेषज्ञ को भेजना और इसकी रिपोर्ट;

xi. बरामद चाकू के उपयोग और मृतक के शरीर पर चोट पहुंचाने के बारे में ऑटोप्सी सर्जन की राय;

xii. तिलक नगर पुलिस स्टेशन के मालखाना प्रभारी के पास प्रदर्शों के सील किए गए पुलंदें जमा करना और पुलंदों को एफएसएल में भेजना;

xiii. एफएसएल की रिपोर्ट और मामले को स्थापित करने में उनके उपयोग।"

<u>विचारण न्यायालय के निष्कर्ष</u>

5. विचारण न्यायालय ने पाया -

(i) अभि.सा. 3 रमेश चंद (इमारत के मालिक) और अभि.सा. 4 राज कुमार (इमारत की पहली मंजिल के किरायेदार) की गवाही ने साबित कर दिया कि संतोष @ भूरे किरायेदार था और उस अपार्टमेंट का निवासी था जहां हरि शंकर का शव, खून आदि पाया गया था।

(ii) अभि.सा.4 की गवाही से साबित हुआ कि हरि ओम, जो उस अपार्टमेंट में आरोपी संतोष @ भूरे के साथ रह रहा था, ने घटना से लगभग एक सप्ताह पहले परिसर छोड़ दिया था। अभि.सा.4 की गवाही ने साबित कर दिया कि जब वह 11.09.2000 को संतोष @ भूरे के अपार्टमेंट में दोपहर से अपराह्न 1.00 बजे के बीच, उसे पैसे देने के लिए गया, तो हरि शंकर (मृतक) को वहां जीवित और नशे की हालत में देखा गया।

(iii) शव की विधिवत पहचान हरि शंकर के रूप में की गई।

(iv) डॉ. एमएम नारनवरे द्वारा तैयार की गई ऑटोप्सी रिपोर्ट, जिसे डॉ. ललित कुमार (अभि.सा. 27) ने साबित कर दिया था, ने स्थापित किया कि मौत हत्या थी।

(v) पुलिस के गवाहों की गवाही, घटनास्थल से खून और सामग्री उठाने/जब्त करने के संबंध में तैयार किए गए दस्तावेजों से साबित होता है कि हत्या उसी अपार्टमेंट में की गई थी।

(vi) एसआई राजेश कुमार (अभि.सा. 15) और निरीक्षक जेएल मीणा (अभि.सा. 28) की गवाही और प्रदर्शित दस्तावेजों से साबित होता है कि पतलून की जेब में एक आत्महत्या का पत्र मिला था जिसे मृतक ने अपनी मौत के समय पहना था।

(vii) पुलिस के गवाहों की गवाही से यह भी साबित हुआ कि 20.09.2000 को आरोपी (संतोष) के जिला इटावा (उत्तर प्रदेश राज्य) में उसके पैतृक स्थान पर उसकी गिरफ्तारी के लिए दौरा किया गया था, लेकिन वह नहीं मिला। तत्पश्चात्, दोनों आरोपियों ने दिनांक 23.09.2000 को न्यायालय में आत्मसमर्पण कर दिया और उन्हें पुलिस हिरासत में भेज दिया गया।

(viii) पुलिस के गवाहों अभि.सा. 28 और अभि.सा. 15 की गवाही और प्रदर्शित दस्तावेजों से साबित होता है कि दोनों आरोपियों ने दो इकबालिया खुलासे किए थे। एक, 23-09-2000 को,

जिसके परिणामस्वरूप कोई खोज नहीं हुई, और दूसरा, 25-09-2000 को, जिसके परिणामस्वरूप संतोष की निशानदेही पर खून से सने कपड़े और नीरज की निशानदेही पर एक चाकू/खंजर मिला।

(ix) अभि.सा. 15 और अभि.सा. 28 की गवाही से साबित हुआ कि नीरज की लिखावट और हस्ताक्षर का नमूना प्राप्त किया गया था और इस आशय का एक फर्द तैयार किया गया था और आरोपी नीरज के आत्महत्या का पत्र, नमूना लिखावट और हस्ताक्षर को तुलना/राय के लिए फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (एफएसएल) भेजा गया था।

(x) राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार के वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी (दस्तावेज), एफएसएल-सह-पदेन रासायनिक परीक्षक, जिनकी रिपोर्ट दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 293 (संक्षेप में संहिता) के अंतर्गत स्वीकार्य है, ने दिनांक 29-12-2000 की रिपोर्ट के माध्यम से पुष्टि की कि आत्महत्या के पत्र और नमूने एक ही व्यक्ति की लिखावट में थे।

(xi) ऑटोप्सी सर्जन डॉ. एमएम नारनवरे द्वारा तैयार किए गए प्र.अभि.सा.27/बी ने सुझाव दिया कि नीरज की निशानदेही पर बरामद चाकू/खंजर से ऐसी चोटें आई होंगी जो मृतक के शरीर पर पाई गई थीं।

पुलिस के गवाहों की गवाही आदि से साबित हुआ कि फोरेंसिक जांच के लिए भेजे गए सामानों को विधिवत सील किया गया था, ठीक से रखा गया था और भेजा गया था।

(xii) सीरोलॉजिस्ट रिपोर्ट ने साबित कर दिया कि संतोष @ भूरे के कहने पर बरामद किए गए कपड़ों में उसी समूह का मानव रक्त था जो मृतक द्वारा उसकी मृत्यु के समय पहने गए पतलून और बनियान पर पाया गया था।

6. उपरोक्त निष्कर्षों के आधार पर, विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि सिद्ध परिस्थितियों ने एक श्रृंखला का गठन किया, जिसने निर्णायक रूप से संकेत दिया कि आरोपी संतोष @ भूरे ने सह-आरोपी नीरज के साथ अपराध किया और साक्ष्यों को हटाने के लिए खंजर और खून से सने कपड़े छिपा दिए और आगे, पुलिस की आंखों में धूल झोंकने के लिए, नीरज ने मृतक द्वारा पहनी गई पतलून की जेब में एक आत्महत्या का पत्र लिखा और डाल दिया। विचारण न्यायालय ने पाया कि आरोपियों ने उनके खिलाफ पेश होने वालीं अपराध में संलिप्तता दिखाने वालीं परिस्थितियों के लिए कोई व्यावहारिक स्पष्टीकरण नहीं दिया था, इसलिए वे भा.दं.सं. की धारा 302 सहपठित धारा 34 के तहत दोषी ठहराए जाने और सजा सुनाए जाने योग्य थे। हालांकि, पूर्व आपसी सहमती के संबंध में किसी भी साक्ष्य के अभाव में, विचारण न्यायालय ने उन्हें आपराधिक साजिश के आरोप से बरी कर दिया।

7. उनकी दोषसिद्धि से व्यथित, संतोष @ भूरे और नीरज ने उच्च न्यायालय के समक्ष अलग-अलग अपील दायर कीं। उच्च न्यायालय ने नीरज की अपील मंजूर कर ली जबकि संतोष @ भूरे की अपील खारिज कर दी गई।

<u>उच्च न्यायालय के निष्कर्ष</u>

8. उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के दो निर्णयों नामतः ***सुखविंदर सिंह व अन्य*** *बनाम* ***पंजाब राज्य***, और ***उत्तर प्रदेश राज्य*** *बनाम* ***राम बाबू मिश्रा*** पर भरोसा करते हुए अधिकथित किया कि नीरज की लिखावट में आत्महत्या का पत्र होने के संबंध में विशेषज्ञ की राय से बचना होगा, क्योंकि नीरज की लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने न तो उसकी सहमति और न ही न्यायालय की अनुमति / आदेश से प्राप्त किए गए थे। न्यायालय ने अधिकथित किया कि एक बार साक्ष्यों से इनकार कर दिया जाता है तो नीरज की दोषसिद्धि को बरकरार रखने के लिए शायद ही कोई ऐसी परिस्थिति बचती है, जो उसे दोषी ठहरा सके। नतीजतन, नीरज की अपील स्वीकार कर ली गई।

9. सह-अभियुक्त संतोष @ भूरे के संबंध में, उच्च न्यायालय ने अभियोजन पक्ष को यह साबित करने में सफल पाया - (क) कि 12.09.2000 को लगभग सुबह 1अपराह्न 1.00 बजे मृतक का शव उसके किरायेदारी और कब्जे के तहत अपार्टमेंट

में पाया गया था; (ख) कि मृतक की मृत्यु हत्या से हुई थी; (ग) कि संतोष फरार हो गया था और उसे 23.09.2000 को ही पकड़ा जा सका; (घ) कि उसके प्रकटीकरण बयान और उनकी निशानदेही पर खून से सने कपड़े बरामद किए गए थे; और (ङ) कि उन कपड़ों में मानव मूल का खून था और उसी समूह का खून था जो मृतक द्वारा पहने गए कपड़ों पर पाया गया था। उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि उपरोक्त परिस्थितियों ने अब तक एक श्रृंखला का गठन किया है जिससे निर्णायक रूप से संकेत मिलता है कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह संतोष था और किसी और ने अपराध नहीं किया था, इसलिए, उसके खिलाफ दिखाई देने वाली फंसाने वालीं परिस्थितियों के उचित स्पष्टीकरण के अभाव में, संतोष की दोषसिद्धि और सजा को बरकरार रखा जाना चाहिए। नतीजतन, उनकी अपील खारिज कर दी गई थी।

10. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना लिया है।

<u>आपराधिक अपील संख्या 575/2011 में प्रस्तुतियाँ</u>

11. आपराधिक अपील संख्या 575/2011 में, अपीलकर्ता संतोष @ भूरे की ओर से, यह तर्क दिया गया था कि, सर्वप्रथम, इस बात का कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है कि संतोष अपार्टमेंट का किरायेदार था; दूसरे, हत्या का कोई मकसद साबित नहीं हुआ है; तीसरा, प्रासंगिक समय पर उस अपार्टमेंट में संतोष की उपस्थिति साबित नहीं हुई है; और, चौथा, जब पुलिस दल ने घटनास्थल का दौरा किया, तो एक प्लेट, ग्लास, स्टील का कटोरा, व्हिस्की की चौथाई बोतल, नमकीन स्नैक्स मिश्रण का पैकेट मिला, फिर भी एफएसएल रिपोर्ट चुप है कि क्या उन वस्तुओं पर अपीलकर्ता के फिंगरप्रिंट पाए गए थे, जिससे पता चलता है कि किसी और ने अपराध किया था।

12. रक्तरंजित कपड़ों की खोज/बरामदगी के लिए प्रकटीकरण बयान के संबंध में, यह तर्क दिया गया था कि, सर्वप्रथम, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा आरोप लगाया गया था, दो प्रकटीकरण बयान थे, पहले के परिणामस्वरूप कोई खोज नहीं हुई, इसलिए, पहले और दूसरे प्रकटीकरण के बीच क्या हुआ, इस बारे में साक्ष्य के अभाव में, छिपाने के स्थान की खोज के आधार के रूप में दूसरे प्रकटीकरण बयान की साख को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचा है। इससे भी ज्यादा, जब वह स्थान उसी इमारत की छत है, जहां 13 दिन पहले हत्या हुई थी। इसके अलावा, पुलिस गवाहों के बयान से, ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों आरोपियों द्वारा लगभग एक साथ समान

प्रकटीकरण बयान दिए गए थे, इसलिए, स्पष्ट और संतोषजनक साक्ष्यों के अभाव में कि किसका प्रकटीकरण बयान पहले किया गया था, इस तरह के खुलासे और परिणामी बरामदगी को बहुत अधिक महत्व नहीं दिया जा सकता है।

13. इसके बाद यह तर्क दिया गया कि यह मानते हुए कि खून से सने कपड़े 25.09.2000 को बरामद किए गए थे, यह साबित करने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य मौजूद नहीं था कि वे कपड़े आरोपी के थे। दो आरोपियों में से एक संतोष @ भूरे का पुलिस को दिया गया बयान साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नहीं है।

14. उपरोक्त के अलावा, अपीलकर्ता संतोष @ भूरे के विद्वान अधिवक्ता ने ज़ोरदार तर्क दिया कि एक अभियुक्त के अपार्टमेंट में एक शव की उपस्थिति, जो दूसरों की पहुंच में है और लॉक और चाबी या अभियुक्त के विशेष नियंत्रण में नहीं है, अपने आप में यह अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त नहीं है कि आरोपी ने अपराध किया है, विशेष रूप से, जब अपराध के लिए कोई सिद्ध उद्देश्य नहीं है और मृतक को आरोपी के साथ में आखिरी बार जीवित देखे जाने का कोई साक्ष्य नहीं है। इसके अलावा, घटना के संभावित समय के आसपास अपार्टमेंट या आसपास के क्षेत्र में संतोष की उपस्थिति के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं है। बल्कि, अभि.सा. 4 ने कहा कि 11.09.2000 को जब वह दोपहर और 1 बजे के बीच अपार्टमेंट में गया, तो उसने मृतक को वहां देखा, लेकिन संतोष @ भूरे को वहां नहीं देखा, बल्कि, मृतक ने उसे बताया कि संतोष @ भूरे घर पर नहीं था। इसके अलावा, घटनास्थल पर व्हिस्की की बोतल, स्नैक्स पाउच आदि की उपस्थिति से पता चलता है कि मृतक के पास उसे संगत देने के लिए कोई व्यक्ति था। हालांकि, अभियोजन पक्ष के साक्ष्य इस बात का प्रकटीकरण नहीं कर सके कि उन वस्तुओं पर किसके उंगलियों के निशान पाए गए थे। इस प्रकार, अभियोजन पक्ष के साक्ष्य परिस्थितियों की श्रृंखला में एक बड़ा अंतर छोड़ देते हैं, जिससे वह अपराध में तीसरे व्यक्ति का हाथ होने से इनकार करने में विफल रहता है। इसलिए, संदेह का लाभ अपीलकर्ता को मिलना चाहिए।

15. अंत में, उनके अनुसार, उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करने में गलती की कि संतोष ने घटना की तारीख यानी 11/12.09.2000 से 23.09.2000 तक खुद को गुप्त रूप से छिपाकर एक दोषी दिमाग को प्रतिबिंबित किया। यह प्रस्तुत किया गया कि उक्त टिप्पणी का कोई आधार नहीं है, सबसे पहले, क्योंकि 11.09.2000 को अपार्टमेंट या उसके आसपास अपीलकर्ता की उपस्थिति, या उसके बाद किसी भी

समय, शव की बरामदगी होने तक साबित नहीं होती है और, दूसरी बात, संतोष का स्पष्टीकरण है कि जब उसके मूल स्थान पर अपराध के बारे में जानकारी प्राप्त हुई थी, तो उसके माता-पिता ने उससे जानकारी की पुष्टि करने के लिए दिल्ली जाने का अनुरोध किया था। यह स्पष्टीकरण इस परिस्थिति के साथ फिट बैठता है कि उसने 23.09.2000 को न्यायालय में आत्मसमर्पण कर दिया।

16. **इसके विपरीत,** राज्य की ओर से, यह तर्क दिया गया था कि यह संदेह से परे साबित होता है कि जिस अपार्टमेंट में शव मिला था, वह संतोष की किरायेदारी में था; कि संतोष द्वारा किए गए खुलासे के आधार पर और निशानदेही पर खून से सने कपड़े बरामद किए गए थे; उक्त कपड़ों पर रक्त उसी समूह का था जो मृतक द्वारा उसकी मृत्यु के समय पहने गए कपड़ों पर था; यह कि संतोष ने किरायेदार होने के बावजूद हत्या के संबंध में पुलिस को कोई जानकारी नहीं दी, बल्कि 23.09.2000 तक फरार रहा, भले ही पुलिस ने 20.09.2000 को उसके मूल स्थान पर छापा मारा था; और संतोष की ओर से कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि मृतक का शव उसके अपार्टमेंट में कैसे मौजूद था। बल्कि, इनकार का एक झूठा मामला स्थापित किया गया था जो उसके दोषी दिमाग को दर्शाता है। इसलिए, संलिप्तता दर्शाने वालीं परिस्थितियों की श्रृंखला पूरी हो गई है, जो निर्णायक रूप से आरोपी के अपराध की ओर इशारा करती है। इसलिए संतोष की अपील खारिज की जाए।

<u>आपराधिक अपील संख्या 576/2011 में प्रस्तुतियाँ</u>

17. राज्य की ओर से यह प्रस्तुत किया गया था कि उच्च न्यायालय ने विशेषज्ञ रिपोर्ट को इस आधार पर खारिज करने में स्पष्ट त्रुटि की कि नीरज की लिखावट और हस्ताक्षर तुलना के लिए स्वीकार्य नहीं थे क्योंकि उन्हें भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में "आईईए, 1872") की धारा 73 के तहत विचार किए गए न्यायालय के किसी भी आदेश के बिना जबरन प्राप्त किया गया था। यह आग्रह किया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण इस न्यायालय के ग्यारह न्यायाधीशों की संविधान पीठ के ***बॉम्बे राज्य*** *बनाम* ***काठी कालू औघड़*** में निर्णय के अनुरूप है। अन्यथा भी, न तो भारत के संविधान का अनुच्छेद 20(3) और न ही आईईए, 1872 की धारा 73 जांच के दौरान किसी आरोपी या संदिग्ध के नमूना हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए जांच एजेंसी की शक्तियों को सीमित करती है।

18. उपरोक्त के प्रकाश में, राज्य की ओर से यह तर्क दिया गया था कि चूंकि नीरज ने उनसे प्राप्त और तुलना के लिए उपयोग किए गए नमूना हस्ताक्षर और लेखन पर विवाद नहीं किया था, इसलिए विशेषज्ञ रिपोर्ट को खारिज नहीं किया जा सकता था। इस प्रकार, जैसा कि यह साबित होता है कि आत्महत्या पत्र पतलून की जेब से बरामद किया गया था जिसे मृतक ने अपनी मृत्यु के समय पहना था, और नीरज की निशानदेही पर चाकू / खंजर की बरामदगी हुई है, जो डॉक्टर के अनुसार, उन चोटों का कारण बन सकती है जैसा कि मृतक के शरीर पर पाई गईं थीं, यह उचित संदेह से परे साबित होता है कि नीरज ने अपराध में सक्रिय रूप से भाग लिया था, जिससे उसने खुद को धारा 34 भा.दं.सं. की सहायता से धारा 302 भा.दं.सं. के तहत दोषी ठहराए जाने और सजा सुनाए जाने के योग्य बना लिया है। मृतक के शरीर पर पाई गईं चोटों के बरामद हथियार के उपयोग के कारण होने के संबंध में डॉक्टर की राय की प्रासंगिकता के संबंध में, इस न्यायालय का ***मालती साहू*** *बनाम* ***राहुल और एक अन्य*** में निर्णय उद्धृत किया गया था।

19. **इसके विपरीत,** नीरज का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि चाकू/खंजर की कथित बरामदगी झूठी है और निम्नलिखित कारणों से खारिज किए जाने योग्य है :- सबसे पहले, प्रकटीकरण बयान बरामदगी का आधार होने के नाते अरक्षणीय है क्योंकि, पुलिस गवाहों के अनुसार, दोनों आरोपियों ने समान खुलासे किए थे और किसका प्रकटीकरण पहले किया गया था, साक्ष्यों से स्पष्ट नहीं है; दूसरा, बरामदगी का पहला प्रयास विफल रहा; तीसरा, बरामदगी का कथित सरकारी गवाह प्रीतपाल सिंह (अभि.सा.13) एक विशेष पुलिस अधिकारी निकला; चौथा, अभि.सा. 13 ने कहा कि फर्द पर उसके हस्ताक्षर पुलिस चौकी में प्राप्त किए गए थे; पांचवां, चाकू में कोई खून नहीं था और इसलिए, अपराध से नहीं जोड़ा जा सकता था; छठा, ऑटोप्सी रिपोर्ट में विभिन्न मापों की चोटों का प्रकटीकरण किया गया है, जो कई तेज धारदार हथियारों के उपयोग का सुझाव देता है; और, सातवां, जिस चिकित्सक ने यह राय दी है कि बरामद चाकू से ऐसी चोटें लग सकती हैं, वह वैज्ञानिक विशेषज्ञ नहीं है, जो संहिता की धारा 293 में विनिदष्ट है, इसलिए उस चिकित्सक को गवाह के रूप में पेश न किए जाने की स्थिति में उस रिपोर्ट को अधिक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

20. पतलून की बरामदगी के संबंध में, यह प्रस्तुत किया गया था कि उक्त बरामदगी नीरज के इशारे पर नहीं है, इसलिए इसका उसके लिए कोई साक्ष्य मूल्य नहीं है। और सह-आरोपी संतोष @ भूरे का बयान कि दो पतलून में से एक नीरज का था, साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है। इसके अलावा, यह साबित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि दो पतलूनों में से एक, या शर्ट नीरज का थी।

21. आत्महत्या पत्र के लेखकत्व के संबंध में, यह प्रस्तुत किया गया था कि, सबसे पहले, एफएसएल रिपोर्ट साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा सही पाया गया है; और, दूसरी बात, यह साबित करने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि आत्महत्या पत्र में लिखा गया लेखन नीरज का था। इसके अलावा, विशेषज्ञ की रिपोर्ट सिर्फ एक राय है और अपने आप में यह निष्कर्ष का आधार नहीं बन सकती है, खासकर जब आत्महत्या पत्र लिखने का समर्थन करने के लिए कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य नहीं है।

22. यह भी आग्रह किया गया था कि नीरज और मृतक या सह-आरोपी संतोष @ भूरे के बीच कोई संबंध स्थापित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया गया था। अन्यथा, अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं था जो यह स्थापित करता हो कि किसी भी समय, घटना के संभावित समय के निकट या नहीं, नीरज को आसपास के क्षेत्र में देखा गया था। इस प्रकार, किसी भी संबंध जोड़ने वाले साक्ष्य के अभाव में, परिस्थितियों की श्रृंखला पूरी नहीं हुई थी कि नीरज को दोषी ठहराया जा सके। इसलिए नीरज को बरी करने का उच्च न्यायालय का आदेश हस्तक्षेप की मांग नहीं करता है।

<u>चर्चा और विश्लेषण</u>

23. हमने प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार किया है और अभिलेख का अवलोकन किया है। इससे पहले कि हम आगे बढ़ें, खुद को याद दिलाना उचित होगा कि यह एक ऐसा मामला है जहां हत्या का कोई प्रत्यक्षदर्शी विवरण नहीं है। अभियोजन पक्ष कुछ परिस्थितियों पर भरोसा करके आरोपी पर लगाए गए आरोप को सिद्ध करने का प्रयास करता है। कब परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर कानूनी रूप से दोषसिद्धि को बरकरार रखा जा सकता है, इस हेतु कानून अच्छी तरह से तय है -

जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में, पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए; इन परिस्थितियों में एक निश्चित प्रवृत्ति होनी चाहिए जो आरोपी के अपराध की ओर इशारा करती हो; संचयी रूप से ली गई परिस्थितियों को इस हद तक पूरी तरह से एक श्रृंखला बनानी चाहिए कि इस निष्कर्ष से बचा न जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था; परिस्थितियों को केवल अभियुक्त के अपराध के बारे में परिकल्पना के अनुरूप होना चाहिए; और उन्हें साबित होने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभव परिकल्पना को बाहर करना चाहिए। इसके अलावा, जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, वे पूरी तरह से स्थापित होनी चाहिए, जिससे अर्थ है कि उन्हें 'अनिवार्य ही' या 'अवश्य ही' स्थापित होना चाहिए और न कि उनके स्थापित होने की'संभावना हो'। (***शरद बिरधीचंद सारदा*** *बनाम* ***महाराष्ट्र राज्य*** देखें)।

24. उपरोक्त के अलावा, आपराधिक मुकदमे से निपटने के दौरान, एक न्यायालय को आपराधिक न्यायशास्त्र के सबसे मौलिक सिद्धांत से अनजान नहीं होना चाहिए, जो यह है कि आरोपी को 'अनिवार्य रूप से' और न केवल 'संभावित रूप से' दोषी होना चाहिए, इससे पहले कि न्यायालय उसे दोषी ठहराने के लिए आगे बढ़े। ***शिवाजी, सहबराव बोबड़े और अन्य*** *बनाम* ***महाराष्ट्र राज्य*** में, इस न्यायालय ने उपरोक्त सिद्धांत पर विस्तार से टिप्पणी करते हुए कहा कि 'हो सकता है' और 'अनिवार्य रूप से होने' के बीच की मानसिक दूरी लंबी है और अस्पष्ट अनुमानों को निश्चित निष्कर्षों से विभाजित करती है।

25. उपरोक्त कानूनी सिद्धांतों में वृद्धि करत हुए, ***देवीलाल*** *बनाम* ***राजस्थान राज्य*** में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने कहा कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित एक मामले में जहां दो विचार संभव हैं, एक उसके अपराध की ओर इशारा करता है और दूसरा उसके निर्दोष होने की ओर, वहां अभियुक्त एक उस लाभ का हकदार है जो उसके लिए अनुकूल है। निर्णय का प्रासंगिक भाग नीचे दिया गया है :-

> *"18. ... हालांकि अभिलेख पर मौजूद सामग्री उनके प्रति कुछ संदेह रखती है, लेकिन अभियोजन पक्ष अपने मामले को "सच हो सकता है" के दायरे से "सच होना चाहिए" के स्तर तक ले जाने में विफल रहा है, जैसा कि आपराधिक*

आरोप पर दोषसिद्धि के लिए कानून में अनिवार्य रूप से आवश्यक है। यह कहना सही है कि आपराधिक मुकदमे में, संदेह, चाहे वह कितना भी गंभीर क्यों न हो, साक्ष्य का स्थान नहीं ले सकता है।

19. ... परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले में अभिलेख के मामले पर दो विचार संभव हैं, एक आरोपी के अपराध की ओर इशारा करता है और दूसरा उसकी बेगुनाही की ओर इशारा करता है। आरोपी वास्तव में उस लाभ का हकदार है जो उसके लिए अनुकूल है।"

26. उपरोक्त कानूनी सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमें जांच करनी होगी - (i) क्या अभियोजन पक्ष द्वारा भरोसा की गई परिस्थितियां उचित संदेह से परे साबित हुई हैं; (ii) क्या वे परिस्थितियां निश्चित प्रवृत्ति की हैं जो अभियुक्त के दोष की ओर इशारा करती हैं; (iii) क्या उन परिस्थितियों को संचयी रूप से लिए जाने पर एक ऐसी श्रृंख्ला बनती है जो इस हद तक पूर्ण है कि इस निष्कर्ष से कोई बच नहीं सकता है कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था; (iv) क्या वे केवल अभियुक्तों के दोषी होने की परिकल्पना के अनुरूप हैं; और (v) क्या वे सिद्ध की जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभव परिकल्पना को बाहर करते हैं या नहीं।

27. इस मामले में, जिन प्रमुख परिस्थितियों के आधार पर अभियोजन पक्ष दोनों आरोपियों के खिलाफ आरोप सिद्ध करना चाहता है, वे हैं :-

(क) जिस अपार्टमेंट से 12.09.2000 को मृतक का शव बरामद किया गया था, वह संतोष @ भूरे के किरायेदारी और कब्जे में था;

(ख) ऑटोप्सी रिपोर्ट में मृतक की हत्या की पुष्टि एक तेज धार वाले हथियार से कई घावों के परिणामस्वरूप हुई है;

(ग) अपार्टमेंट के फर्श पर और चारपाई पर जहां से शव उठाया गया था, खून के रिसाव ने पुष्टि की कि हत्या उसी अपार्टमेंट में हुई थी;

(घ) एफएसएल रिपोर्ट के अनुसार, मृतक की मौत के समय पहने गए पतलून की जेब में पाया गया आत्महत्या का पत्र सह-आरोपी नीरज की लिखावट में था;

(ङ) 12.09.2000 से 23.09.2000 तक आरोपी संतोष और नीरज का पता नहीं मिला था और उन्हें 23.09.2000 को ही पकड़ा जा सका;

(म) पुलिस हिरासत में 23-09-2000 और 25-09-2000 को दोनों आरोपियों ने (क) अपराध में इस्तेमाल किए गए खंजर और (ख) घटना की तारीख पर आरोपी द्वारा पहने गए खून से सने कपड़े बरामद कराने का आश्वासन देते हुए इकबालिया प्रकटीकरण बयान दिया;

(च) 25-09-2000 को किए गए खुलासे के अनुसरण में, संतोष की निशानदेही पर, उसी इमारत जहां 12.09.2000 को मृतक का शव मिला था, की छत पर कचरे के ढेर से खून से सने कपड़े बरामद किए गए थे; और; नीरज की निशानदेही पर, एक खंजर/चाकू एक अस्पताल के पीछे झाड़ियों से बरामद किया गया था;

(छ) हालांकि, खंजर में कोई खून नहीं था, लेकिन डॉक्टर ने कहा कि इसके उपयोग से ऐसी चोटें हो सकती हैं जो मृतक के शरीर पर देखी गई थीं;

(ज) एफएसएल रिपोर्ट में बरामद कपड़ों पर उसी रक्त समूह के मानव रक्त की उपस्थिति की पुष्टि की गई है जो मौत के समय मृतक द्वारा पहने गए कपड़ों पर पाया गया था;

(झ) साफ इनकार को छोड़कर, आरोपी व्यक्ति उनके खिलाफ दिखाई देने वाली आपत्तिजनक परिस्थितियों का एक ठोस स्पष्टीकरण देने में विफल रहे।

28. अभियोजन पक्ष द्वारा जिन फंसाने वाली परिस्थितियों को आधार बनाया गया है, उनका वर्णन करने के बाद, अब हम जांच करेंगे - (क) क्या उपर्युक्त परिस्थितियां उचित संदेह से परे साबित हुई हैं; और (ख) यदि हां, तो क्या वे व्यक्तिगत रूप से या संचयी रूप से दोनों अभियुक्तों या दोनों अभियुक्तों में से किसी एक के दोष की ओर संकेत करती हैं और साबित होने वाली परिकल्पना को छोड़कर अन्य सभी परिकल्पनाओं को खारिज करती हैं।

<u>परिस्थिति (क) - वह अपार्टमेंट जहां से शव मिला संतोष की किरायेदारी में और कब्जे में पाया गया था।</u>

29. जहां तक संतोष के पास अपार्टमेंट की किरायेदारी का सवाल है, अभि.सा. 3 और अभि.सा. 4 की गवाही से यह साबित हो गया है। उनसे जिरह से कुछ भी ठोस सामने नहीं आ सका और न ही उन्हें ऐसा कोई सुझाव दिया गया जिससे उनके बयान पर संदेह पैदा हो। इसमें कोई संदेह नहीं है कि संतोष ने किरायेदारी से इनकार किया और दावा किया कि इसके संबंध में कोई दस्तावेजी साक्ष्य मौजूद नहीं है, लेकिन चूंकि एक मौखिक किरायेदारी भी हो सकती है, हमारे विचार में, इसके संबंध में नीचले न्यायालयों के निष्कर्ष में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है। हालांकि, संतोष के पास अपार्टमेंट की केवल किरायेदारी ही उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि किसी संपत्ति के मालिक / किरायेदार के खिलाफ उसके अपराध के संबंध में कोई सामान्य धारणा नहीं है यदि उसकी संपत्ति में हत्या की चोटों के साथ एक शव पाया जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है, यदि अभियोजन उन परिस्थितियों की एक श्रृंखला को साबित करने में सफल होता है जिनसे किसी के अपराध के बारे में एक उचित निष्कर्ष निकाला जा सकता है, तो उचित स्पष्टीकरण के अभाव में, न्यायालय हमेशा आईईए, 1872 की धारा 106 की सहायता से उसके अपराध के संबंध में उचित निष्कर्ष निकाल सकता है। लेकिन, यदि परिस्थितियों की श्रृंखला स्थापित नहीं की जाती है, तो अभियुक्त द्वारा स्पष्टीकरण देने में विफलता उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है।

30. ***शंभू नाथ मेहरा*** *बनाम* ***अजमेर राज्य*** **में,** आईईए, 1872 की धारा 106 के दायरे और प्रयोज्यता पर कानून की व्याख्या करते हुए इस न्यायालय ने कहा :-

"9. यह सामान्य नियम निर्धारित करता है कि एक आपराधिक मामले में साक्ष्य का दायित्व अभियोजन पक्ष पर है और धारा 106 द्वारा निश्चित रूप से उस कर्तव्य से मुक्त करने का इरादा नहीं है। इसके विपरीत, यह कुछ असाधारण मामलों को पूरा करने के लिए संरचित है, जिसमें अभियोजन पक्ष के लिए उन तथ्यों को स्थापित करना असंभव होगा, या किसी भी दर पर असंगत रूप से मुश्किल होगा, जो "विशेष रूप से" अभियुक्त के ज्ञान में हैं और जिन्हें वह कठिनाई या असुविधा के बिना साबित कर सकता है। शब्द "विशेष रूप से" इस बात पर जोर देता है। इसका अर्थ ऐसे तथ्यों से है जो पूर्व-प्रतिष्ठित या असाधारण रूप से उसके ज्ञान में हैं। अगर इस धारा की व्याख्या अन्यथा की जाए, तो इससे बहुत ही चौंकाने वाला निष्कर्ष निकलेगा कि हत्या के मामले में यह साबित करने का दायित्व आरोपी पर होता है कि उसने हत्या नहीं की क्योंकि उससे बेहतर कौन जान सकता है कि उसने हत्या की या नहीं। यह स्पष्ट है कि यह इरादा नहीं हो सकता है और प्रिवी काउंसिल ने दो बार इस धारा का अर्थ निकालने से इनकार कर दिया है, जैसा कि भारत के बाहर कुछ अन्य अधिनियमों में पुन: प्रस्तुत किया गया है, इसका मतलब यह है कि एक आरोपी व्यक्ति पर यह दिखाने का दायित्व है कि उसने वह अपराध नहीं किया है जिसके लिए उस पर मुकदमा चलाया गया है।"

31. ***नागेंद्र साह*** *बनाम* ***बिहार राज्य*** **में, *शंभू नाथ मेहरा के मामले (पूर्वोक्त)*** के निर्णय का अनुसरण करते हुए, आईईए, 1872 की धारा 106 की प्रयोज्यता के संबंध में कानून को निम्नानुसार स्पष्ट किया गया था :-

"22. इस प्रकार, साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 उन मामलों पर लागू होगी जहां अभियोजन पक्ष उन तथ्यों को स्थापित करने में सफल रहा है जिनसे कुछ अन्य तथ्यों के

अस्तित्व के बारे में एक उचित निष्कर्ष निकाला जा सकता है जो अभियुक्त के विशेष ज्ञान के भीतर हैं। जब अभियुक्त उक्त अन्य तथ्यों के अस्तित्व के बारे में उचित स्पष्टीकरण देने में विफल रहता है, तो न्यायालय हमेशा एक उचित निष्कर्ष निकाल सकता है।

23. जब कोई मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर टिका होता है, यदि अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के आधार पर उस पर रखे गए दायित्व के निर्वहन में उचित स्पष्टीकरण देने में विफल रहता है, तो ऐसी विफलता परिस्थितियों की श्रृंखला के लिए एक अतिरिक्त कड़ी प्रदान कर सकती है। परिस्थितिजन्य साक्ष्य द्वारा शासित मामले में, यदि अभियोजन पक्ष द्वारा स्थापित की जाने वाली परिस्थितियों की श्रृंखला स्थापित नहीं की जाती है, तो साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के तहत दायित्व का निर्वहन करने में अभियुक्त की विफलता बिल्कुल प्रासंगिक नहीं है। जब श्रृंखला पूरी नहीं होती है, तो बचाव पक्ष का मिथ्या वचन अभियुक्त को दोषी ठहराने का कोई आधार नहीं है।

32. ***शिवाजी चिंताप्पा पाटिल*** *बनाम* ***महाराष्ट्र राज्य*** **में,** यह कहा गया कि आईईए, 1872 की धारा 106 सीधे तौर पर एक ही छत के नीचे रहने वाले पति या पत्नी और मृतक के साथ देखा गया अंतिम व्यक्ति होने के खिलाफ काम नहीं करती है। यह कहा गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 अभियोजन पक्ष को उचित संदेह से परे अभियोजन पक्ष के मामले को साबित करने के अपने प्राथमिक दायित्व का निर्वहन करने से मुक्त नहीं करती है। यह केवल तभी होता है जब अभियोजन पक्ष ने ऐसे साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं, जिन पर यदि विश्वास किया जाता है, तो दोषसिद्धि को बनाए रखा जा सकता है, या जो प्रथम दृष्टया मामला बनता है, कि उन तथ्यों पर विचार करने का सवाल उठता है जिनके साक्ष्य का दायित्व आरोपी पर होगा। कानूनी सिद्धांत की व्याख्या करने के बाद, इस तर्क को खारिज करते हुए कि

संहिता की धारा 313 के तहत स्पष्टीकरण देने में अभियुक्त की विफलता श्रृंखला को पूरा करेगी, यह कहा गया :-

> "25. ...*अब तक यह कानून का अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है, कि गलत स्पष्टीकरण या गैर-स्पष्टीकरण का उपयोग केवल एक अतिरिक्त परिस्थिति के रूप में किया जा सकता है, जब अभियोजन पक्ष ने परिस्थितियों की श्रृंखला को साबित कर दिया हो जिससे अभियुक्त के अपराध के अलावा कोई अन्य निष्कर्ष नहीं निकला हो। हालांकि, इसे श्रृंखला को पूरा करने के लिए एक कड़ी के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है।*"

33. तत्काल मामले में, अभि.सा. 4 के अनुसार, मृतक को 11.09.2000 को दोपहर और अपराह्न 1.00 बजे के बीच उस अपार्टमेंट में जीवित देखा गया था। उस अपार्टमेंट में शव की उपस्थिति के बारे में सूचना 12-09-2000 को लगभग सुबह 10.40 बजे मिली। जाहिर है, हत्या के प्रत्यक्षदर्शी के अभाव में, अभियोजन पक्ष हत्या के सही समय का प्रकटीकरण नहीं कर सकता है, लेकिन, अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, उपरोक्त घटनाओं के अनुक्रम से, हत्या 11.09.2000 को दोपहर अपराह्न 1.00 बजे और 12.09.2000 को सुबह 10.40 बजे के बीच किसी भी समय की जा सकती थी। दिलचस्प बात यह है कि जांच के दौरान अभि.सा. 3 ने पुलिस को प्रकटीकरण किया था कि उसने संतोष @ भूरे को दिनांक 11.09.2000 को लगभग शाम 4.00 बजे *गठड़ी* (कपड़े से बना एक थैला) के साथ इमारत से बाहर निकलते हुए देखा था, जबकि अभि.सा.4 ने जांच के दौरान कहा कि उसने मृतक को 11.09.2000 को रात लगभग 9.00 बजे या उसके आसपास दोनों आरोपियों के साथ ताश खेलते और शराब पीते हुए देखा था। तथापि, न्यायालय में अपनी गवाही के दौरान न तो अभि.सा.3 और न ही अभि.सा.4 ने 11-09-2000 को या उसके बाद किसी भी समय उस अपार्टमेंट/इमारत में या उसके आस-पास संतोष @ भूरे की उपस्थिति के बारे में प्रकटीकरण किया, जब तक कि मृतक का शव बरामद नहीं हुआ। इसलिए, उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था। जिरह के दौरान, अभियोजन पक्ष के कहने पर, अभि.सा.3 ने संतोष @ भूरे को गठड़ी के साथ दिनांक 11-09-2000 को इमारत से बाहर निकलते हुए देखने से इनकार कर दिया। इतना ही नहीं,

अभि.सा.3 जांच के दौरान दिए गए अपने पिछले बयान से मुकर गया कि 11.09.2000 को दोपहर या उसके आसपास, संतोष @ भूरे स्नैक्स आदि खरीदने के लिए उसकी किराने की दुकान पर आया था। इस प्रकार, अभि.सा. 3 के बयान से, यह बिल्कुल भी स्थापित नहीं है कि अपीलकर्ता संतोष @ भूरे 11-09-2000 को या उसके बाद किसी भी समय मृतक के शव की बरामदगी तक घर में मौजूद था।

34. बल्कि, अभि.सा. 3 की गवाही से एक महत्वपूर्ण परिस्थिति उभरती है, जो यह है कि जिस अपार्टमेंट से 12.09.2000 को शव निकाला गया था, वह ताला लगा या बंद नहीं पाया गया था। अभि.सा. 3 की गवाही यह है कि 12.09.2000 को जब वह उस इमारत के भूतल पर स्थित अपनी किराने की दुकान पर था, तो एक धोबी महिला ने उन्हें सूचित किया कि इमारत की दूसरी मंजिल पर खून पड़ा हुआ है। यह जानकारी मिलने पर, वह ऊपर गया तो देखा कि एक व्यक्ति फर्श पर खून से लथपथ फोल्डिंग चारपाई पर मृत पड़ा है। अभि.सा. 3 या किसी अन्य गवाह का कोई बयान नहीं है कि उस अपार्टमेंट का दरवाजा ताला लगा या बंद था और उसे तोड़ना पड़ा। यह अभि.सा. 4 की गवाही के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

35. अभि.सा. 4 उस इमारत की पहली मंजिल का किरायेदार है। उसकी गवाही के अनुसार, 11.09.2000 को दोपहर और अपराह्न 1.00 बजे के बीच, जब वह संतोष @ भूरे के अपार्टमेंट में गया तो उसने हरि शंकर (मृतक) को नशे की हालत में वहां मौजूद पाया। अभि.सा. 4 ने यह नहीं बताया है कि संतोष भी वहां मौजूद था। बल्कि, अभि.सा. 4 के अनुसार, जब उसने हरि शंकर से संतोष के ठिकाने के बारे में पूछताछ की, तो उसे सूचित किया गया कि संतोष वहां नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभि.सा.4 को पक्षद्रोही घोषित किया गया था और जिरह के दौरान उसने यह बयान देने से इनकार कर दिया कि 11.09.2000 की रात को, लगभग 9.00 बजे, उसने हरि शंकर को उस अपार्टमेंट में नीरज और संतोष के साथ ताश खेलते हुए देखा था। अभि.सा. 4 की गवाही से जो बात सामने आती है वह यह है कि हरि शंकर को 11.09.2000 को दोपहर और अपराह्न 1.00 बजे के बीच उस अपार्टमेंट में अकेला देखा गया था। संक्षेप में, अभियोजन पक्ष यह प्रदर्शित करने में विफल रहा है कि (क) अपार्टमेंट बंद था या संतोष @ भूरे के विशेष नियंत्रण में था और (ख) मृतक 11.09.2000 को या उसके बाद किसी भी समय, मृतक के शव की बरामदगी तक संतोष या नीरज की संगत में था। अभियोजन पक्ष ने यह भी साबित नहीं किया

है कि 11-09-2000 को या उसके बाद किसी भी समय, मृतक के शव की बरामदगी तक, दोनों आरोपियों को उस अपार्टमेंट या इमारत के आसपास देखा गया था जहां से 12-09-2000 को शव बरामद किया गया था।

36. उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, हमारा विचार है कि हालांकि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में सफल रहा है कि जिस अपार्टमेंट में मृतक का शव पाया गया था, वह संतोष की किरायेदारी में था, लेकिन यह कोई साक्ष्य देने में विफल रहा कि दोनों आरोपी, या उनमें से कोई भी, या तो 11-09-2000 को या उसके बाद किसी भी समय, शव की बरामदगी तक वहां या आसपास मौजूद था। दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष हत्या के संभावित समय के आसपास आरोपी की उपस्थिति दिखाने में बुरी तरह विफल रहा। इसके अलावा, अभियोजन पक्ष ने यह स्थापित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया कि संबंधित अपार्टमेंट ताला और चाबी या संतोष या नीरज के विशेष नियंत्रण में था। यहां तक कि उस अपार्टमेंट पर संतोष के विशेष कब्जे के सिद्धांत को अभि.सा. 4 के इस बयान से झटका लगता है कि घटना से एक हफ्ते पहले तक हरि राम संतोष @ भूरे के साथ उस अपार्टमेंट में रहता था। अभियोजन पक्ष के पास यह दिखाने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं है कि संबंधित अपार्टमेंट में संतोष के लिए एक अलग सीढ़ी थी जिस तक पहुंच उसके अलावा और किसी को नहीं थी। उपरोक्त सभी कारणों के लिए, हालांकि हम मानते हैं कि संबंधित अपार्टमेंट की किरायेदारी संतोष के पास साबित हुई थी, लेकिन न तो उस अपार्टमेंट में उसकी और न ही नीरज की उपस्थिति, प्रासंगिक समय के आसपास, किसी भी साक्ष्य से साबित होती है। यह भी साबित नहीं हुआ है कि संतोष उस अपार्टमेंट के अनन्य कब्जे या नियंत्रण में था। बल्कि, अभि.सा. 4 की गवाही से ऐसा प्रतीत होता है कि हरि राम संतोष के साथ वहां रह रहा था, हालांकि, वह घटना से एक सप्ताह पहले वहां से चला गया था। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं है कि मृतक हरि शंकर हरिओम के जाने के बाद वहां आया था या पहले से वहां रह रहा था। वास्तव में इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है - (क) कि मृतक उस अपार्टमेंट में कब आया था और (ख) वह किस हक से वहां रह रहा था। ऊपर की चर्चा और मामले के तथ्यों के प्रकाश में, हमारे विचार से, संतोष को दिए गए अपार्टमेंट में शव की उपस्थिति ऐसी ठोस परिस्थिति नहीं है, जो आईईए, 1872 की धारा 106 की

सहायता से संतोष की दोषसिद्धि को बनाए रख सके, यह समझाने की जिम्मेदारी उस पर डाल दे कि किन परिस्थितियों में कई चोटों के साथ शव वहां पाया गया।

परिस्थिति (ख) और (ग) - मृत्यु का कारण और हत्या की जगह

37. जहां तक हरि शंकर की मौत हत्या होने और धारदार हथियार से लगी कई चोटों के कारण होने का सवाल है, निचले न्यायालयों के निष्कर्षों को कोई गंभीर चुनौती नहीं दी गई है। इसलिए, हम इस निष्कर्ष को स्वीकार करते हैं कि मौत हत्या थी और तेज हथियार के उपयोग के कारण चोटों का परिणाम थी। इसी तरह, इस खोज को भी कोई चुनौती नहीं है कि अपार्टमेंट से रक्त आदि उठाया गया था, जिससे पुष्टि होती है कि हत्या वहां हुई थी। हालांकि, उस अपार्टमेंट से खून या खून से सनी चारपाई/चादर के अलावा व्हिस्की की बोतल, नमकीन स्नैक्स के खाली पैकेट/पाउच, सिगरेट के बट आदि उठाए गए थे, लेकिन उन वस्तुओं को दोनों आरोपियों में से किसी के साथ जोड़ने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है ताकि उनकी उपस्थिति की पुष्टि की जा सके और संबंधित समय पर किसी अन्य व्यक्ति की उपस्थिति से इनकार किया जा सके।

परिस्थिति (घ) - बरामद आत्महत्या के पत्र का नीरज की लिखावट में होना

38. जहां तक मौत के समय पतलून की जेब से आत्महत्या का पत्र बरामद होने का सवाल है, जांच अधिकारी जे. एल. मीणा (अभि.सा.28) और एसआई राजेश (अभि.सा.15) की गवाही से यह साबित हो गया है और इसके साक्ष्य के तौर पर फर्द मकबूजगी और आत्महत्या का पत्र पेश किया गया और प्रदर्शित किया गया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि फर्द मकबूजगी पर हस्ताक्षर करने वाले एक सरकारी गवाह अभि.सा. 3 ने अपनी उपस्थिति में जब्ती से इनकार किया है, लेकिन निचले दो न्यायालयों ने पुलिस गवाहों की गवाही पर भरोसा करते हुए, समवर्ती रूप से आत्महत्या पत्र की बरामदगी को साबित होना पाया है। हमें उक्त निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का कोई कारण प्रतीत नहीं होता है। हालांकि, असली मुद्दा यह है कि क्या यह विधिवत साबित हुआ कि आत्महत्या का पत्र नीरज ने लिखा था। अभियोजन पक्ष के अनुसार, अगर ऐसा था, तो यह हत्या से मृत्यु होने को छुपाने के लिए लिखा गया था, जो नीरज की निशानदेही पर चाकू/खंजर की बरामदगी के साथ मिलकर अपराध में उसकी संलिप्तता को दर्शाता है।

39. निर्विवाद रूप से, एफएसएल रिपोर्ट को छोड़कर कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि आत्महत्या का पत्र नीरज की लिखावट में है। यहां तक कि एफएसएल रिपोर्ट की स्वीकार्यता पर बचाव पक्ष द्वारा सवाल उठाया गया है कि यह न्यायालय की अनुमति के बिना जांच के दौरान जबरन प्राप्त नमूना हस्ताक्षर और लिखावट पर आधारित है, इसलिए, ऐसे नमूनों का उपयोग आत्म-दोषारोपण के खिलाफ नियम का उल्लंघन करेगा, इसलिए रिपोर्ट को अस्वीकार्य माना जाना चाहिए; और (ख) विशेषज्ञ को गवाह के रूप में पेश न किए जाने की स्थिति में रिपोर्ट सिद्ध नहीं होती है। विचारण न्यायालय ने इसकी स्वीकार्यता पर आपत्तियों को स्वीकार नहीं किया और इसलिए, यह मानने के लिए विशेषज्ञ रिपोर्ट पर भरोसा किया कि नीरज आत्महत्या के पत्र के लेखक था। हालांकि, उच्च न्यायालय ने इसकी स्वीकार्यता पर आपत्ति को स्वीकार कर लिया और कहा कि यह साबित करने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि आत्महत्या का पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था।

40. राज्य की ओर से उच्च न्यायालय के निष्कर्ष को चुनौती देते हुए, यह तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय ने यह कहकर गलती की - (क) कि न्यायालय की अनुमति के बिना जांच एजेंसी द्वारा नमूना हस्ताक्षर प्राप्त नहीं किए जा सकते हैं; और (ख) एफएसएल रिपोर्ट का कोई साक्ष्य मूल्य नहीं था।

41. इसके विपरीत, बचाव पक्ष की ओर से यह तर्क दिया जाता है- (क) कि भले ही यह मान लिया जाए कि विशेषज्ञ रिपोर्ट स्वीकार्य थी, यह निष्कर्ष निकालने का एकमात्र आधार नहीं हो सकता है कि आत्महत्या का पत्र संतोष द्वारा लिखा गया था, बल्कि, न्यायालय को यह पता लगाने के लिए सभी साक्ष्यों को देखना चाहिए कि क्या सिद्ध तथ्य और परिस्थितियां उक्त मुद्दे का समर्थन करती हैं; और (ख) विचारण न्यायालय को यह पता लगाने के लिए एक कवायद करनी चाहिए थी कि क्या आत्महत्या पत्र पर लिखा गया लेखन नीरज के साथ मेल खाता है और क्या सिद्ध तथ्य और परिस्थितियां इस प्रस्ताव का समर्थन करती हैं कि आत्महत्या पत्र वास्तव में नीरज द्वारा लिखा गया था, न कि किसी और द्वारा।

42. उपरोक्त प्रस्तुतियों के गुणागुण पर ध्यान देने से पहले, हम अभिलेख पर यह रखते हैं कि हमें किसी गवाह के बयान को न तो दिखाया गया था और न ही हमें ऐसा मिला जिसमें उस आत्महत्या पत्र पर नीरज के लेखन की पहचान की गई हो या जिसमें कहा गया हो कि आत्महत्या पत्र नीरज ने उसकी उपस्थिति में लिखा था।

अभियोजन पक्ष ने यह साबित करने के लिए दो साक्ष्यों पर भरोसा किया कि आत्महत्या का पत्र नीरज ने लिखा था। पहला, नीरज द्वारा पुलिस की आंखों में धूल झोंकने के लिए पत्र लिखने के संबंध में पुलिस के सामने किया गया दो आरोपियों का इकबालिया प्रकटीकरण; और दूसरा एफएसएल रिपोर्ट है।

43. जहां तक आत्महत्या पत्र के नीरज द्वारा लिखे जाने के संबंध में दोनों आरोपियों के इकबालिया बयान की स्वीकार्यता का सवाल है, पुलिस के समक्ष एक आरोपी द्वारा किए जा रहे बयान न केवल आईईए, 1872 की धारा 25 और 26 बल्कि संहिता की धारा 162 द्वारा भी प्रभावित होगा क्योंकि केवल उतना ही प्रकटीकरण/इकबालिया बयान का भाग स्वीकार्य है जो कि स्पष्ट रूप से खोजे गए तथ्य से संबंधित है। चूंकि आत्महत्या पत्र 12-09-2000 को पाया गया था, अर्थात् 23-09-2000 और 25-09-2000 को कथित रूप से किए गए खुलासों से बहुत पहले, हमारे विचार में आत्महत्या पत्र प्रकटीकरण करने वाले साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नहीं है।

<u>एफएसएल रिपोर्ट की स्वीकार्यता</u>

44. जहां तक एफएसएल रिपोर्ट की स्वीकार्यता का संबंध है, उच्च न्यायालय ने इसे जांच एजेंसी द्वारा जांच के दौरान जबरन प्राप्त किए गए नमूनों की तुलना पर आधारित होने के कारण इसे अस्वीकार्य माना। उच्च न्यायालय का मानना था कि विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए जांच एजेंसी द्वारा ऐसे नमूनों का उपयोग आत्म-दोषारोपण के खिलाफ नियम के साथ-साथ आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों का उल्लंघन होगा। ऐसा करने में, उच्च न्यायालय ने ***सुखविंदर सिंह (पूर्वोक्त)*** के मामले में इस न्यायालय की कुछ टिप्पणियों पर भरोसा किया।

45. ***सुखविंदर सिंह (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष विचार के लिए जो मुद्दा आया वह यह था कि क्या विवादित फिरौती पत्र पर लिखावट आरोपी की होना साबित हुई थी। उस मामले में, अभियोजन पक्ष के अनुसार, तहसीलदार-कार्यकारी मजिस्ट्रेट के निर्देशन में आरोपी का नमूना लेखन लिया गया था और विवादित फिरौती पत्र के साथ उस नमूने की तुलना के आधार पर, विशेषज्ञ ने राय दी कि फिरौती पत्र पर लेखन आरोपी का था। उस संदर्भ में यह माना गया कि यद्यपि आईईए, 1872 की धारा 73 विशेष रूप से यह नहीं कहती है कि इस तरह की तुलना कौन कर सकता है, लेकिन धारा 73 को समग्र रूप से पढ़ने

से यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह न्यायालय है जिसे विवादित और स्वीकृत लेखन की तुलना करके या किसी विशेषज्ञ की सहायता लेकर अपनी राय बनानी है। जहां तक न्यायालय है जो अभियुक्त को लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने प्रदान करने का निर्देश दे सकता है, और आईईए, 1872 की धारा 73 के दूसरे अनुच्छेद के दायरे और उद्देश्य का संबंध, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि :-

> *"20. धारा 73 (पूर्वोक्त) का दूसरा अनुच्छेद न्यायालय को उसके समक्ष उपस्थित किसी भी व्यक्ति को अपना नमूना लेखन देने का निर्देश देने में सक्षम बनाता है, "न्यायालय को ऐसे लेखन की तुलना ऐसे व्यक्ति द्वारा कथित रूप से लिखे गए लेखन से करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से"। "न्यायालय को तुलना करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से" शब्दों का स्पष्ट निहितार्थ यह है कि न्यायालय के समक्ष कुछ ऐसी कार्यवाही लंबित है, जिसमें या जिसके परिणामस्वरूप न्यायालय के लिए ऐसे लेखन की तुलना करना आवश्यक है। **इसलिए "न्यायालय को तुलना करने में सक्षम बनाने" के प्रयोजनार्थ निर्देश दिया जाना आवश्यक है और न कि एक जांच या अभियोजन एजेंसी को विवादित लेखन के साथ उनकी अंतिम तुलना के लिए नमूना लेखन को मामले में साक्ष्य के रूप में प्राप्त करने और पेश करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से। जहां मामले की अभी भी जांच चल रही है और किसी भी न्यायालय में कोई कार्यवाही लंबित नहीं है जिसमें दो लेखों की तुलना करना आवश्यक हो सकता है, व्यक्ति (अभियुक्त) को अपना नमूना लेखन देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। धारा 73 की भाषा किसी भी न्यायालय को किसी अभियुक्त को यह निर्देश देने की अनुमति नहीं देती है कि वह किसी कार्यवाही में तुलना के लिए अपना नमूना लेखन दे, जिसे बाद में किसी अन्य सक्षम न्यायालय में स्थापित किया जा सकता है। हमारी राय में साक्ष्य***

अधिनियम की धारा 73 का उपयोग जांच के दौरान नमूना लेखन एकत्र करने के लिए नहीं किया जा सकता है और इसका सहारा केवल तभी लिया जा सकता है जब जांच या विचारण न्यायालय जिसके समक्ष कार्यवाही लंबित है, को 'इसे तुलना करने में सक्षम बनाना के उद्देश्य' हेतु लेखन की आवश्यकता होती है। *दंड प्रक्रिया संहिता के तहत जांच करने वाला न्यायालय वास्तव में साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के तहत उसके समक्ष पेश होने वाले आरोपी व्यक्ति को निर्देश देने का हकदार है कि वह अपनी लिखावट का नमूना दे ताकि न्यायालय, जिसके द्वारा बाद में उसकी सुनवाई होने की संभावना हो सकती है, को विवादित लेखन के साथ उसकी तुलना करने में सक्षम बनाया जा सके।* ***इसलिए, हमारी राय में न्यायालय जो व्यक्ति को अपना नमूना लेखन देने के लिए निर्देश जारी कर सकती है, वह या तो आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत जांच करने वाला न्यायालय हो सकता है या आरोपी व्यक्ति पर मुकदमा चलाने वाला न्यायालय इस उद्देश्य से कि ताकि वह ऐसे व्यक्ति द्वारा कथित रूप से लिखे गए लेखन के साथ नमूना लेखन की तुलना करने में सक्षम हो सके। एक न्यायालय जो दंड प्रक्रिया संहिता के तहत जांच नहीं कर रहा है या मुकदमे का संचालन नहीं कर रहा है, उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 की सीधी भाषा में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के दूसरे अनुच्छेद में निहित प्रकृति का कोई निर्देश जारी करने की अनुमति नहीं है। शब्दों "धारा 73 में न्यायालय में मौजूद किसी भी व्यक्ति" का संदर्भ केवल ऐसे व्यक्तियों से है जो न्यायालय के समक्ष लंबित किसी कारण के पक्षकार हैं और किसी दिए गए मामले में उक्त कारण में गवाहों को भी शामिल कर सकते हैं, लेकिन जहां इसके निर्धारण के लिए***

न्यायालय के समक्ष कोई कारण लंबित नहीं है, किसी व्यक्ति की लिखावट की तुलना के प्रयोजनों के लिए इसे प्राप्त करने का सवाल ही नहीं उठ सकता है और इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के प्रावधानों का कोई उपयोग नहीं होगा।"

(जोर दिया गया)

ऊपर दिए गए शब्दों में धारा 73 के दायरे और उद्देश्य से निपटने के बाद यह और देखने पर कि जब नमूने लिए गए थे तो न्यायालय के समक्ष कोई जांच या विचारण लंबित नहीं था, जबकि यह ध्यान में रखते हुए कि अभियोजन पक्ष ने यह प्रकटीकरण नहीं किया कि जांच, पूछताछ या विचारण के किस चरण में अभियुक्त को उसके नमूना लेखन को लेने के लिए कार्यकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था, और यह कि नमूना लेखन कार्यकारी मजिस्ट्रेट के निर्देश के तहत क्यों प्राप्त किया गया था, न कि नामित न्यायालय के निर्देश के तहत, यह माना गया कि जिस तरीके से अभियुक्त का नमूना लेखन लिया गया था वह पूरी तरह से आपत्तिजनक था और आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों के खिलाफ था। इसलिए, नमूना लेखन को तुलना के लिए अस्वीकार्य पाया गया और परिणामी रिपोर्ट को छोड़ दिया गया।

46. हमारे विचार में, ***सुखविंदर सिंह (पूर्वोक्त)*** कानून के रूप में यह निर्धारित नहीं करता है कि जांच एजेंसी विवादित लेखन या हस्ताक्षर के संबंध में एक विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी संदिग्ध या अभियुक्त के नमूना लेखन या हस्ताक्षर प्राप्त नहीं कर सकती है। बल्कि ***सुखविंदर सिंह(पूर्वोक्त)*** को जांच या विचारण करते समय आईईए, 1872 की धारा 73 के तहत न्यायालय में निहित शक्ति के दायरे और प्रयोग से संबंधित निर्णय के रूप में समझा जाना चाहिए।

47. जांच एजेंसी को किसी आरोपी की लिखावट या हस्ताक्षर का नमूना प्राप्त करने के लिए जांच के दौरान किस प्रक्रिया का पालन करना होता है इस संबंध में, 23.06.2006 से 2005 के अधिनियम संख्या 25 द्वारा संहिता में धारा 311-क को शामिल करने से पहले संहिता में कोई विशिष्ट प्रावधान मौजूद नहीं था, कम से कम हमें कोई भी नहीं दिखाया गया था।

48. ***राम बाबू मिश्रा (पूर्वोक्त)*** में, संहिता में धारा 311-क को शामिल करने से पहले दिए गए एक निर्णय में, यह माना गया था कि जांच के दौरान एक मजिस्ट्रेट को आरोपी को अपना नमूना लेखन देने का निर्देश देने का अधिकार नहीं है क्योंकि कैदियों की पहचान अधिनियम, 1920 (संक्षेप में "1920 अधिनियम") के प्रावधान कैदियों के नमूना लेखन लेने के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा निर्देश जारी करने के संबंध में चुप थे। हालांकि, महत्वपूर्ण यह है कि उक्त निर्णय इस मुद्दे पर चुप है कि क्या जांच एजेंसी द्वारा जांच के दौरान प्राप्त किए गए आरोपी के नमूना लेखन और हस्ताक्षर का उपयोग विवादित लिखावट या हस्ताक्षर पर एक विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।

49. निस्संदेह, 2005 के अधिनियम संख्या 25 द्वारा, दिनांक 23.06.2006 से संहिता में धारा 311-क सम्मिलित की गई है जिससे प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट को यह अधिकार प्राप्त हो गया है कि वह अभियुक्त सहित किसी भी व्यक्ति को जांच के प्रयोजनों के लिए नमूना हस्ताक्षर या लिखावट देने का निर्देश दे सकता है लेकिन इस प्रावधान का इस मामले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा क्योंकि यह वर्ष 2006 में लागू हुआ था। जबकि तत्काल मामला वर्ष 2000 का है। ***सुखराम*** *बनाम* ***हिमाचल प्रदेश राज्य*** में, इस न्यायालय ने माना कि संहिता की धारा 311-क के संशोधित प्रावधान भावी प्रभाव से लागू होंगे। अन्यथा, मजिस्ट्रेट की अनुमति/आदेश प्राप्त करने का उद्देश्य उन नमूनों की पवित्रता बनाए रखना है ताकि जालसाजी को रोका जा सके। ***आशीष जैन*** *बनाम* ***मकरंद सिंह व अन्य*** में, यह माना गया था कि नमूने लेने के लिए मजिस्ट्रेट से आदेश प्राप्त करने के लिए 1920 अधिनियम की धारा 5 के प्रावधानों का उद्देश्य साक्ष्य की जालसाजी की संभावना को समाप्त करना है। वहां यह भी माना गया था कि वे प्रावधान निर्देशात्मक हैं और न कि अनिवार्य । ***सोनवीर उर्फ सोमवीर*** *बनाम* ***राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)*** में, इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया गया है.

50. संहिता में धारा 311-क को शामिल करने से पहले, संहिता के प्रावधानों की जांच करने पर, हमें ऐसा कोई वैधानिक प्रावधान नहीं मिला जो किसी जांच एजेंसी को विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी आरोपी या संदिग्ध के नमूना हस्ताक्षर और लिखावट एकत्र करने से रोकता हो। चूंकि नमूना हस्ताक्षर/हस्तलिपि प्राप्त करने की प्रक्रिया निर्धारित करने वाली संहिता की धारा 311-क के प्रावधान

इस मामले में जांच पूरी होने के बहुत बाद संहिता में डाले गए थे, इसलिए इसका इस मामले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

51. इस मामले में नीरज की लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने जांच एजेंसी ने जांच के दौरान हासिल किए थे जब संहिता में ऐसे नमूने प्राप्त करने की प्रक्रिया को विनियमित करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान मौजूद नहीं था और ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो जांच एजेंसी को किसी अभियुक्त या संदिग्ध की लिखावट/हस्ताक्षर के नमूने प्राप्त करने से रोकता हो। जहां तक आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों का संबंध है, वे तब लागू होते हैं जब जांच या विचारण जैसी कार्यवाही न्यायालय में लंबित होती है। चूंकि जब नमूने प्राप्त किए गए थे तब किसी भी न्यायालय के समक्ष कोई कार्यवाही लंबित नहीं थी, इसलिए आईईए, 1872 की धारा 73 के प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता था। ऐसी स्थिति में, चूंकि किसी जांच एजेंसी को किसी संदिग्ध या अभियुक्त की लिखावट/हस्ताक्षर के नमूने प्राप्त करने से रोकने के लिए कोई कानूनी प्रावधान मौजूद नहीं था, हमारे विचार में, जांच एजेंसी के पास नमूना हस्तलेखन/हस्ताक्षर सहित ऐसी सामग्री एकत्र करने की शक्ति थी जिससे अभियोजन पक्ष को प्रासंगिक तथ्य पेश करने या किसी प्रासंगिक तथ्य/मामले में तथ्य पर साक्ष्य के किसी टुकड़े की पुष्टि करने में सहायता मिल सके। उपरोक्त कारणों के लिए, हमारे विचार में, जांच एजेंसी द्वारा जांच के दौरान प्राप्त विशेषज्ञ रिपोर्ट (यानी एफएसएल रिपोर्ट), जो जांच के दौरान प्राप्त नीरज की लिखावट/हस्ताक्षर के नमूनों पर आधारित है, को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता था क्योंकि इसे जांच के दौरान प्राप्त किया गया था और आईईए, 1872 की धारा 73 के तहत विचार किए गए न्यायालय के आदेश / अनुमति के बिना प्राप्त किया गया था।

52. अब, हम विशेषज्ञ रिपोर्ट की स्वीकार्यता पर सवाल उठाने के लिए बचाव पक्ष की ओर से दिए गए तर्क के एक और चरण का परीक्षण करेंगे, जो यह है कि नमूना जबरन प्राप्त किया गया था, इसलिए, इसका उपयोग भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) में निहित आत्मदोषारोपण के खिलाफ मौलिक अधिकार का उल्लंघन करेगा।

53. ***काठी कालू औघड़ (पूर्वोक्त)*** में, *"खुद के खिलाफ गवाह बनना"* वाक्यांश की व्याख्या करते समय, जैसा कि अनुच्छेद 20(3) में होता है, इस न्यायालय की एक

संविधान पीठ ने अनुच्छेद 16 में, बीपी सिन्हा, मुख्य न्यायाधीश द्वारा लिखित बहुमत के दृष्टिकोण के अनुसार, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :-

> "16. इन विचारों को ध्यान में रखते हुए, हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुंचे हैं:
>
> (1) एक आरोपी व्यक्ति को यह नहीं कहा जा सकता है कि उसे खुद के खिलाफ गवाह बनने के लिए मजबूर किया गया क्योंकि उसने पुलिस हिरासत में रहते हुए बयान दिया था। दूसरे शब्दों में, जिस समय विवादित बयान दिया गया था, उस समय पुलिस हिरासत में होने का तथ्य अपने आप में, कानून के एक प्रस्ताव के रूप में, इस निष्कर्ष को जन्म नहीं देगा कि अभियुक्त को बयान देने के लिए मजबूर किया गया था, हालांकि यह तथ्य, किसी विशेष मामले में साक्ष्य में प्रकट की गई अन्य परिस्थितियों के संयोजन में, इस जांच में एक प्रासंगिक विचार होगा कि आरोपी व्यक्ति को विवादित बयान देने के लिए मजबूर किया गया था या नहीं।
>
> (2) एक पुलिस अधिकारी द्वारा किसी आरोपी व्यक्ति से पूछताछ करना, जिसके परिणामस्वरूप एक स्वैच्छिक बयान सामने आता है, जो अंततः फंसाने वाला साबित हो सकता है, "मजबूरी" नहीं है।
>
> (3) **"गवाह होना" अपने व्यापक महत्व में "साक्ष्य प्रस्तुत करने" के बराबर नहीं है; कहने का मतलब यह है कि इसमें न केवल मौखिक या लिखित बयान देना शामिल है, बल्कि दस्तावेजों को प्रस्तुत करना या सामग्री देना भी शामिल है जो आरोपी के अपराध या निर्दोषता को निर्धारित करने के लिए मुकदमे में प्रासंगिक हो सकते हैं।**
>
> (4) **अंगूठे के या पैर या हथेली या उंगलियों के निशान या नमूना लेखन देना या पहचान के माध्यम से शरीर के**

कुछ हिस्सों को दिखाना "गवाह होने" की अभिव्यक्ति में शामिल नहीं है।

(5) "गवाह बनने" का अर्थ है मौखिक बयान या लिखित रूप में दिए गए बयान, न्यायालय में दिए गए या अन्यथा द्वारा प्रासंगिक तथ्यों के संबंध में जानकारी प्रदान करना।

(6) अपने सामान्य व्याकरणिक अर्थों में "गवाह बनने" का अर्थ है न्यायालय में मौखिक गवाही देना। निर्णय विधि अभिव्यक्ति की इस सख्त शाब्दिक व्याख्या से परे चली गई है जो अब एक व्यापक अर्थ रख सकती है, अर्थात्, मौखिक रूप से या लिखित रूप में किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति द्वारा न्यायालय में या न्यायालय के बाहर गवाही देना।

(7) प्रश्नगत बयान को अनुच्छेद 20(3) के निषेध के भीतर लाने के लिए, आरोपी व्यक्ति को बयान देते समय आरोपी व्यक्ति के चरित्र में खड़ा होना चाहिए। यह पर्याप्त नहीं है कि वह बयान दिए जाने के बाद किसी भी समय आरोपी बन जाए।

(जोर दिया गया)

54. अपनी अलग राय में के.सी. दास गुप्ता, न्या. ने अल्पमत के विचार को व्यक्त करते हुए, कुछ बिंदुओं पर बहुमत के दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त करते हुए कहा :-

"33. इसलिए हम पीठ के बहुमत द्वारा प्राप्त इस निष्कर्ष से सहमत हैं **कि किसी आरोपी व्यक्ति को अपनी नमूना लिखावट या हस्ताक्षर; या भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के प्रावधानों के तहत तुलना के उद्देश्य से जांच अधिकारी को या न्यायालय के आदेशों के तहत अपनी उंगलियों, हथेली या पैर के निशान देने के लिए मजबूर करके संविधान के अनुच्छेद 20 (3) का कोई उल्लंघन नहीं किया गया है;** यद्यपि हम अपने विद्वान भाइयों के इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं हो पाए हैं कि अनुच्छेद 20(3)

में "गवाह बनने" को व्यक्तिगत जानकारी प्रदान करने के बराबर माना जाना चाहिए या यह कि एक अभियुक्त तब गवाह नहीं बनता है जब वह कुछ दस्तावेज प्रस्तुत करता है जो उसकी लिखावट में नहीं होता है, भले ही यह उसके खिलाफ मुद्दे या प्रासंगिक तथ्यों में तथ्यों को साबित करता हो।

(जोर दिया गया)

55. ***सेल्वी और अन्य*** *बनाम* ***कर्नाटक राज्य*** मे**,** उपरोक्त दृष्टिकोण के अनुसरण में, यह देखा गया कि :-

"145. ... उदाहरण के लिए, भले ही इस तरह के कार्य जैसे **अनिवार्य रूप से नमूना हस्ताक्षर और लिखावट नमूने प्राप्त करना प्रमाणक प्रकृति के हैं, वे स्वयं से आपत्तिजनक नहीं हैं यदि उनका उपयोग उन तथ्यों या सामग्रियों की पहचान या पुष्टि के उद्देश्य से किया जाता है जिनसे जांचकर्ता पहले से ही परिचित हैं। अनुच्छेद 20(3) के संरक्षण का विस्तार करने के लिए प्रासंगिक विचार यह है कि क्या सामग्री से स्वयं ही दोषी ठहराए जाने या "साक्ष्य की श्रृंखला में एक कड़ी प्रस्तुत करने" जो उस ही परिणाम का कारण बन सकती की संभावना है या नहीं।** इसलिए, मजबूर गवाही की सामग्री पर निर्भरता अनुच्छेद 20(3) के निषेध के भीतर आती है, लेकिन **जांचकर्ताओं को पहले से ज्ञात तथ्यों के साथ पहचान या पुष्टि के उद्देश्य से इसका उपयोग प्रतिबंधित नहीं है।**"

(जोर दिया गया)

56. उपर्युक्त दृष्टिकोण का इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में लगातार पालन किया गया है अर्थात् ***उत्तर प्रदेश राज्य*** *बनाम* ***सुनील***; ***रितेश सिन्हा*** *बनाम* ***यू.पी. राज्य और अन्य;*** और ***राज्य(राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)*** *बनाम* ***नवजोत संधू***."

57. उपरोक्त निर्णयों का अवलोकन करने से यह पता चलता है कि चूंकि नमूना हस्ताक्षर और लिखावट के नमूने अपने आप में आपत्तिजनक नहीं हैं क्योंकि उनका उपयोग उस सामग्री पर लिखावट की पहचान के उद्देश्य से किया जाना है जिससे जांचकर्ता पहले से ही परिचित हैं, ऐसे नमूने अनिवार्य रूप से प्राप्त करना भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) में निहित आत्म-दोषारोपण के खिलाफ नियम का उल्लंघन नहीं होगा।

58. इस मामले में, आत्महत्या पत्र को जांच एजेंसी द्वारा पहले ही जब्त कर लिया गया था और इसलिए नीरज के नमूना हस्ताक्षर और लिखावट प्राप्त करना आत्महत्या पत्र पर हस्ताक्षर / लेखन की पहचान करने के प्रयोजनों के लिए तुलना संभव बनाने के उद्देश्य से किया गया था। चूंकि इस तरह की कवायद भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) के जनादेश का उल्लंघन नहीं करती है, इसलिए बचाव पक्ष का यह तर्क कि जांच के दौरान जबरन प्राप्त नीरज के नमूना हस्ताक्षर का उपयोग, आत्म-दोषारोपण के खिलाफ नियम का उल्लंघन करेगा, अस्वीकृति के योग्य है और तदनुसार, खारिज किया जाता है। इसलिए हम मानते हैं कि जांच एजेंसी द्वारा प्राप्त नीरज के नमूना हस्ताक्षर/लिखावट को केवल इन आरोपों के कारण खारिज नहीं किया जा सकता था कि उन्हें मजिस्ट्रेट / न्यायालय की अनुमति के बिना जांच के दौरान जबरन प्राप्त किया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा इसके विपरीत लिया गया दृष्टिकोण गलत है और तदनुसार, इसे निरस्त किया जाता है।

59. अब हम जांच करेंगे कि क्या तुलना के लिए इस्तेमाल किए गए नमूने नीरज के साबित हुए थे। इस मामले में अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के अनुसार जांच के दौरान नीरज के नमूना हस्ताक्षर और लिखावट प्राप्त की गई थी। नमूनों सहित उनके संबंध में फर्द/दस्तावेज प्रस्तुत किए गए, सिद्ध किए गए और प्रदर्शित किए गए, जिससे यह साबित होता है कि उन्हें उचित रूप से रखा गया था और विशेषज्ञ राय प्राप्त करने के लिए विवादित आत्महत्या पत्र के साथ एफएसएल को भेज दिया गया था। नीरज द्वारा उन नमूनों की वास्तविकता पर सवाल नहीं उठाया गया है। एकमात्र बचाव यह है कि लिखावट और हस्ताक्षर के नमूने मजबूरी में प्राप्त किए गए थे। जैसा कि हमने पहले ही पाया है कि इस तरह की आपत्ति अस्थिर थी, इसलिए, एक बार नमूनों की वास्तविकता विवादित नहीं थी, नमूने तुलना के लिए उपलब्ध थे और विशेषज्ञ रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए सही तरीके से उपयोग किए गए

थे। ऐसे परिदृश्य में, शुद्ध परिणाम यह होगा कि एफएसएल रिपोर्ट, जो संहिता की धारा 293 में निर्दिष्ट एक सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ द्वारा प्रदान की गई थी, इस तथ्य की परवाह किए बिना स्वीकार्य थी कि विशेषज्ञ से गवाह के रूप में पूछताछ नहीं की गई थी। इससे भी अधिक, जब बचाव पक्ष ने विशेषज्ञ को जिरह के लिए बुलाने के लिए कोई आवेदन दायर नहीं किया हो। नतीजतन, एफएसएल रिपोर्ट के अस्वीकार्य होने के संबंध में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष गलत है और तदनुसार, इसे रद्द किया जाता है।

<u>क्या एफएसएल रिपोर्ट अपने आप में यह मानने के लिए पर्याप्त थी कि आत्महत्या पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था अथवा नहीं।</u>

60. हालांकि, केवल यह तथ्य कि विशेषज्ञ की रिपोर्ट साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य थी, इसका मतलब यह नहीं है कि इसे अपने आप इस निष्कर्ष का आधार बनाना चाहिए कि आत्महत्या का पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था। साक्ष्य के एक टुकड़े की स्वीकार्यता और विश्वसनीयता / साख संबंधी योग्यता पूरी तरह से अलग पहलू हैं। एक अस्वीकार्य साक्ष्य से बचना चाहिए। लेकिन जब साक्ष्य का एक टुकड़ा स्वीकार्य होता है, तो एक मुद्दे में तथ्य को निर्धारित करने के लिए इसका क्या महत्व होगा, यह मामले के सिद्ध तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।

61. इस मामले में, उच्च न्यायालय ने विशेषज्ञ रिपोर्ट को स्वीकार्य नहीं मानते हुए खारिज कर दिया, इसलिए, उसने इस तथ्य को निर्धारित करने के लिए कोई कवायद नहीं की कि क्या आत्महत्या का पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था। विचारण न्यायालय ने इसे स्वीकार्य माना और अपने निष्कर्ष को पूरी तरह से उसी पर आधारित किया। विचारण न्यायालय की प्रासंगिक टिप्पणियां, इसके निर्णय के अनुच्छेद 95 में पाई गई हैं, जो नीचे दी गई हैं :-

> "95. मैंने हस्तलेखन विशेषज्ञ की रिपोर्ट क्यू1 से चिह्नित (प्र.अभि.सा.15/जी) का अध्ययन किया है और आरोपी नीरज के हाथ से लिखे गए नमूने एस1 से एस8 (प्र.अभि.सा.15/एफ1 से एफ8) की जांच स्टीरियो माइक्रोस्कोप, वीडियो स्पेक्ट्रल कंपेरिएटरIV, डॉक्यूसेंटर और पोलीव्यू सिस्टम आदि जैसे वैज्ञानिक उपकरणों से विभिन्न प्रकाश स्थितियों में की गई। विशेषज्ञ ने रिपोर्ट के

समर्थन में विभिन्न कारण दिए हैं, कि प्रश्नगत पत्र और लिखावट एक ही व्यक्ति के हैं। विशेषज्ञ ने निष्कर्ष निकाला है कि प्रश्नगत और नमूना लेखन के बीच कोई विचलन नहीं देखा गया है और लेखन की आदतों में उपरोक्त समानताएं महत्वपूर्ण और पर्याप्त हैं और उन्हें आकस्मिक संयोग वश नहीं ठहराया जा सकता है और जब सामूहिक रूप से विचार किया जाता है, तो वे विशेषज्ञ को इस राय की ओर ले जाते हैं कि दोनों लेखन एक ही व्यक्ति के हाथ के हैं। मुझे हाथ से हस्त-लेख विशेषज्ञ की तुलना में एक अलग राय बनाने का कोई कारण नहीं मिलता है। मेरा मानना है कि अभियोजन पक्ष यह स्थापित करने में सक्षम रहा है कि प्र.अभि.सा.15/जी पत्र और आरोपी नीरज की नमूना लिखावट प्र.अभि.सा.15/एफ1 से एफ8 एक व्यक्ति की एक ही हस्तलेख में हैं और वह आरोपी नीरज है।

62. विचारण न्यायालय के निर्णय से उपरोक्त उद्धरण को पढ़ने से संकेत मिलता है कि आत्महत्या पत्र के लेखन के संबंध में निष्कर्ष पूरी तरह से विशेषज्ञ की राय पर आधारित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आईईए, 1872 की धारा 45 के तहत एक विशेषज्ञ राय प्रासंगिक है, लेकिन क्या यह मुद्दे में तथ्य के निर्धारण का एकमात्र आधार हो सकता है, यह विभिन्न न्यायिक निर्णयों में चर्चा का विषय रहा है। ***महाराष्ट्र राज्य*** *बनाम* ***सुखदेव सिंह* और अन्य** में, इस न्यायालय ने कहा :-

"29. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि किसी भी दस्तावेज के लेखक की पहचान के बारे में साक्ष्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं *(i)* उस व्यक्ति की गवाही से जो ऐसे व्यक्ति की लिखावट से परिचित और जानकार है या *(ii)* एक विशेषज्ञ की गवाही के माध्यम से जो विवादित लेखन और वैज्ञानिक आधार पर स्वीकृत लेखन की तुलना करने के लिए योग्य और सक्षम है और (*iii*) न्यायालय द्वारा

विवादित दस्तावेज की तुलना स्वीकार किए गए दस्तावेज से करना। ... **लेकिन चूंकि तुलना द्वारा हस्तलिपि की पहचान का विज्ञान अचूक नहीं है, इसलिए विवेक की मांग है कि इस तरह की राय पर कार्रवाई करने से पहले न्यायालय को स्वीकृत लेखन जिसे तुलना का एकमात्र आधार बनाया गया है के लेखक के बारे में पूरी तरह से संतुष्ट होना चाहिए और न्यायालय को भी हस्तलेखन विशेषज्ञ की क्षमता और विश्वसनीयता के बारे में पूरी तरह से संतुष्ट होना चाहिए।** यह वास्तव में सच है कि स्वभाव और आदत से, समय के साथ, प्रत्येक व्यक्ति कुछ लक्षण विकसित करता है जो उसके लेखन को एक अलग चरित्र देते हैं जिससे लेखक की पहचान करना संभव हो जाता है, लेकिन साथ ही यह महसूस किया जाना चाहिए कि चूंकि हस्तलेखन विशेषज्ञ आम तौर पर मुकदमा लड़ रहे एक पक्ष के द्वारा संलग्न होते हैं, तो वे जानबूझकर या अनजाने में, उस राय के पक्ष में झुकाव रखते हैं जो उन्हें संल्गन करने वाले पक्ष के लिए सहायक होती है। यही कारण है कि हम विपरीत पक्षों द्वारा संलग्न दो हस्तलेखन विशेषज्ञों द्वारा दिए गए परस्पर विरोधी विचारों के मामलों को देखते हैं। **इसलिए, इसे स्वीकार करने से पहले उनकी राय का मूल्यांकन करने में अतिरिक्त चौकसी और सावधानी बरतना आवश्यक है। इसलिए न्यायालयों ने विवेक के नियम के रूप में हस्तलिपि विशेषज्ञ की राय के साक्ष्य पर निर्विवाद विश्वास करने से इनकार कर दिया है। आम तौर पर न्यायालयों ने केवल हस्तलिपि विशेषज्ञ की गवाही के आधार पर दोषसिद्धि को खतरनाक माना है क्योंकि इस तरह के साक्ष्य को निर्णायक नहीं माना जाता है। चूंकि इस तरह के राय संबंधी साक्ष्य ठोस साक्ष्य की जगह नहीं ले सकते हैं, इसलिए न्यायालयों ने विवेक के**

नियम के रूप में, ऐसे साक्ष्यों पर कार्रवाई करने से पहले पुष्टि की तलाश की है। यह सच है कि कानून का कोई नियम नहीं है कि हस्तलिपि विशेषज्ञ के साक्ष्य पर तब तक कार्रवाई नहीं की जा सकती जब तक कि पर्याप्त रूप से पुष्टि न की जाए, लेकिन न्यायालय इस तरह के राय संबंधी साक्ष्य पर निर्विवाद भरोसा करने में धीमी रही हैं, क्योंकि लिखावट की पहचान के विज्ञान की अपूर्ण प्रकृति और इसकी स्वीकृत पतनशीलता है। ..."

(जोर दिया गया)

63. ***राम नारायण*** *बनाम* ***उत्तर प्रदेश राज्य*** में, इस न्यायालय ने कहा :-

"6. ... अब इसमें कोई संदेह नहीं है कि साक्ष्य में दी गई हस्तलिपि विशेषज्ञ की राय साक्ष्य में संलग्न किसी भी अन्य विशेषज्ञ राय से कम त्रुटिपूर्ण नहीं है, जिसके परिणामस्वरूप इस तरह के साक्ष्य को बहुत सावधानी के साथ प्राप्त किया जाना चाहिए। **लेकिन यह राय संबंधी साक्ष्य, जो प्रासंगिक है, स्वीकृति के योग्य हो सकता है यदि विशेषज्ञ द्वारा व्यक्त किए गए विचार का समर्थन करने वाले दस्तावेज से संबंधित आंतरिक या बाहरी साक्ष्य हैं। ..."**

(जोर दिया गया)

64. ***फ़ख़रुद्दीन*** *बनाम* ***मध्य प्रदेश प्रदेश राज्य*** में इस न्यायालय ने कहा :-

"धारा 45 और धारा 47 दोनों के तहत साक्ष्य एक राय है, पहले में वैज्ञानिक तुलना द्वारा और दूसरे में लगातार टिप्पणियों और अनुभव के परिणामस्वरूप परिचितता के आधार पर। **किसी भी मामले में न्यायालय को ऐसे साधनों से खुद को संतुष्ट करना चाहिए जो खुले हों कि राय पर कार्रवाई की जा सके। न्यायालय के लिए एक ऐसा खुला साधन यह है कि वह स्वीकृत या सिद्ध लेखन पर अपनी**

टिप्पणी लागू करे और विवादित लेखन के साथ उनकी तुलना करे, हस्तलेखन विशेषज्ञ न बने, बल्कि एक मामले में विशेषज्ञ के दायरे को सत्यापित करे और दूसरे मामले में राय के मूल्य का मूल्यांकन करे। यह तुलना स्वीकृत या सिद्ध लेखन में विशेषताओं के विश्लेषण और विवादित लेखन में बड़े पैमाने पर समान विशेषताओं की खोज पर निर्भर करती है। इस तरह से गवाह, चाहे विशेषज्ञ हो या अन्य, की राय जांच के अधीन है और हालांकि प्रासंगिक है प्रारम्भ करने के लिए प्रमाणक बन जाती है। **जहां एक विशेषज्ञ की राय दी जाती है, न्यायालय को खुद देखना चाहिए और विशेषज्ञ की सहायता से अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आना चाहिए कि क्या यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि दो लेखन एक ही व्यक्ति द्वारा किए गए हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि न्यायालय को एक विशेषज्ञ की भूमिका निभानी चाहिए, बल्कि यह कहना चाहिए कि न्यायालय साबित हुए तथ्य को केवल तभी स्वीकार कर सकती है जब उसने स्वयं देखकर खुद को संतुष्ट किया हो कि विशेषज्ञ या अन्य गवाह की राय को स्वीकार करना सुरक्षित है।"**

(जोर दिया गया)

65. ऊपर दी गई टिप्पणियों से अंतर्निहित सिद्धांत यह है कि यद्यपि किसी दस्तावेज के लेखन के संबंध में किसी निष्कर्ष को केवल हस्तलिपि विशेषज्ञ की राय पर आधारित करना अनुचित नहीं है, लेकिन, विवेक के एक नियम के रूप में, लिखावट की पहचान के विज्ञान की अपूर्ण प्रकृति और इसकी स्वीकृत पतनशीलता के कारण, इस तरह की राय पर सावधानी के साथ भरोसा किया जाना चाहिए और इस स्वीकार किया जा सकता है, यदि अपने स्वयं के आकलन पर, न्यायालय संतुष्ट है कि विचाराधीन दस्तावेज़ से संबंधित आंतरिक और बाहरी साक्ष्य विशेषज्ञ की राय का समर्थन करते हैं और उसकी राय को स्वीकार करना सुरक्षित है।

66. इस मामले में, आत्महत्या के पत्र के लेखन के संबंध में, विचारण न्यायालय ने हालांकि पूरी तरह से विशेषज्ञ रिपोर्ट पर भरोसा करके अभियोजन पक्ष के पक्ष में एक निष्कर्ष दिया, लेकिन स्वीकार किए गए और विवादित लेखन के संबंध में अपनी टिप्पणियों के संबंध में अपनी संतुष्टि दर्ज नहीं की। इसने यह भी जांच नहीं की कि क्या मामले के सिद्ध तथ्यों और परिस्थितियों में विशेषज्ञ रिपोर्ट पर भरोसा करना सुरक्षित होगा। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि आईईए, 1872 की धारा 73 एक न्यायालय को न्यायालय में मौजूद किसी व्यक्ति द्वारा लिखे गए शब्दों या आंकड़ों की तुलना ऐसे व्यक्ति द्वारा कथित रूप से लिखे गए किसी भी शब्द या आंकड़े से करने में सक्षम बनाती है। इसलिए विचारण न्यायालय इस तरह की कवायद कर सकता था। लेकिन, इस मामले में, विचारण न्यायालय द्वारा ऐसी कोई कवायद नहीं की गई है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस मामले में नीरज की लिखावट की पहचान करने वाला कोई गवाह का बयान नहीं है या यह प्रकटीकरण नहीं किया गया है कि नीरज ने उसकी उपस्थिति में आत्महत्या का पत्र लिखा था। आत्महत्या के पत्र की सामग्री की प्रासंगिकता को समझाने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं है। दिलचस्प बात यह है कि आत्महत्या के पत्र में एक *छोटे पोरवाल* को दोषी ठहराया गया है। इस तरह के आरोप क्यों लगाए गए थे; चाहे यह किसी अन्य घटना के संदर्भ में हो, अभियोजन पक्ष के साक्ष्य इस पर चुप हैं। इसके अलावा, यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि जांच अधिकारी ने मृतक की लिखावट से परिचित व्यक्ति(ओं) से पूछताछ की ताकि इस संभावना को खारिज किया जा सके कि आत्महत्या का पत्र मृतक के लेखन में था। हमारे विचार में, नीरज द्वारा हत्या को छिपाने के लिए लिखे जा रहे आत्महत्या के पत्र की अभियोजन की कहानी को आश्वासन देने के लिए इस तरह की कवायद आवश्यक थी, क्योंकि, पहली बात, स्पष्ट रूप से मौत आत्मघाती नहीं थी, और, दूसरी बात, यह किसी अन्य घटना के चिंतन में लिखे जाने की संभावना से इनकार कर सकती थी। इस संदर्भ में देखा जाए तो विशेषज्ञ रिपोर्ट को छोड़कर, अभियोजन पक्ष की कहानी को यह आश्वासन देने के लिए कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य मौजूद नहीं है कि आत्महत्या का पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था।

67. उपरोक्त के अलावा, हमें यह स्वीकार करना काफी मुश्किल लगता है कि नीरज ने मृतक द्वारा पहनी गई पतलून की जेब में अपने द्वारा लिखा गया एक

आत्महत्या पत्र क्यों छोड़ा, खासकर, जब एक आम आदमी की दृष्टि से भी चोटें हत्या से संबंधित थीं। विशेष रूप से, मृतक के शरीर पर आठ मृत्यु पूर्व चोटें पाई गईं। विचारण न्यायालय के निर्णय के अनुच्छेद 72 में चोटों को उद्धरित किया गया है। उसी को नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है :-

"बाहरी चोटें:

i) उरोस्थि क्षेत्र पर एक छिद्रित चोट लंबवत रूप से रखी गई है, जो बाएं से दाएं निप्पल के 10 सेमी और उरोस्थि से 9 सेमी नीचे स्थित है, जिसका आकार 3 सेमी x 1.1 सेमी x गुहा गहरा है।

ii) छाती के बाईं ओर एक और मर्मज्ञ चोट, चोट नंबर 1 पर 6 सेमी बांए, लंबवत रूप से रखी गई, बाएं निप्पल से 1.5 सेमी ऊपर और 6.5 सेमी मध्य-उरोस्थि रेखा पर बाईं ओर, आकार 4 सेमी x 1.8 सेमी x गुहा गहरा है।

iii) पेट के बाईं ओर एक और मर्मज्ञ चोट क्षैतिज रूप से रखी गई है, जो दाएं निप्पल से 14.4 सेमी नीचे, मध्य-पेट रेखा से 4 सेमी, आकार 3.8 सेमी x 1.4 सेमी x गुहा गहरी है।

iv) चोट संख्या 3 से 5.8 सेमी नीचे दाहिने ओर पेट पर एक और मर्मज्ञ चोट क्षैतिज रूप से रखी गई है, जिसका आकार 4.6 सेमी x 2.1 सेमी x गुहा गहरा है।

v) पेट के बाईं ओर एक और मर्मज्ञ चोट, क्षैतिज रूप से रखी गई है, जो 4.5 सेमी बाईं ओर और बाएं निप्पल से 21 सेमी नीचे स्थित है, आकार 9 सेमी x 3.5 सेमी x गुहा गहरा है।

vi) उरोस्थि पर एक घाव की चोट, चोट नंबर 1 के दाईं ओर .5 सेमी, आकार 0.3 सेमी x 0.2 सेमी x त्वचा गहरा।

vii) चोट नंबर 4 से 10 सेमी नीचे पेट पर एक और घाव है, आकार 1.6 सेमी x .8 सेमी x त्वचा गहरा है।

viii) पेट पर एक और घाव 2.4 सेमी का था, जो 0.3, आकार 0.7 सेमी x 0.4 सेमी x त्वचा की गहराई में था।

68. उन चोटों पर एक नज़र डालने से पता चलेगा कि उनमें से पांच घाव गुहा तक गहरे थे जो भेद या छेद रहे थे। उनमें से दो छाती पर और तीन पेट पर थे। इस तरह की चोटें स्पष्ट रूप से हत्या से संबंधित हैं, इसलिए, इस हत्या की घटना को आत्महत्या के रूप में छिपाना तर्कपूर्ण नहीं लगता है। इसके अलावा, चोटें समान माप की नहीं हैं। इन परिस्थितियों में, एक सवाल यह उठता है कि नीरज, जिसका मृतक या सह-आरोपी संतोष के साथ कोई सिद्ध संबंध नहीं है, या जहां तक उस बात का संबंध है कि अपार्टमेंट में शव पाया गया था, हत्या की घटना को छिपाने का व्यर्थ प्रयास क्यों करेगा और इस तरह अपने दोष का निशान छोड़ेगा। इसका जवाब देने के लिए, अभियोजन पक्ष ने कोई स्वीकार्य साक्ष्य पेश नहीं किया है। इस प्रकार, अगर हम यह मान भी लें कि एक आत्महत्या का पत्र मिला है, तो यह किस चरण पर लिखा गया था - हत्या से पहले या बाद में, या किसी अन्य घटना के संबंध में, जिस पर मृतक ने विचार किया था - क्या कोई भी अनुमान लगा सकता है।

69. उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि नीरज ने आत्महत्या पत्र लिखने की फंसाने वाली परिस्थिति से इनकार किया है और कोई आंतरिक या बाहरी साक्ष्य नहीं है, विशेषज्ञ रिपोर्ट को छोड़कर, जो नीरज द्वारा आत्महत्या पत्र लिखने का समर्थन करती है, हमारा विचार है कि हालांकि विशेषज्ञ साक्ष्य आत्महत्या पत्र में लिखे गए लेख पर एक राय के रूप में स्वीकार्य थे, लेकिन,

अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्यों के समग्र मूल्यांकन पर, केवल इसके आधार पर, यह कहना बेहद असुरक्षित होगा कि मृतक की पतलून से प्राप्त आत्महत्या का पत्र नीरज द्वारा लिखा गया था।

<u>परिस्थिति (ङ) - दोनों आरोपियों का दिनांक 12.09.2000 से 23.09.2000 तक पता नहीं लगा था</u>

70. यह तथ्य कि दोनों अभियुक्तों को 23-09-2000 को पकड़ा जा सका था जब वे मामले के संबंध में आत्मसमर्पण करने के लिए उपस्थित हुए थे पुलिस के गवाहों द्वारा साबित किया गया है और उनकी गवाही पर संदेह करने का कोई अच्छा कारण नहीं है। इसके अलावा, आरोपियों ने न तो साक्ष्य पेश किए और न ही अपनी गिरफ्तारी या आत्मसमर्पण की किसी अन्य तारीख या समय या स्थान के संबंध में स्पष्टीकरण दिया। अपने बयान में, संहिता की धारा 313 के तहत, संतोष ने प्रकटीकरण किया था कि उसे दिल्ली में कुछ घटना के बारे में सूचित किया गया था, इसलिए, उसी का पता लगाने के लिए, वह दिल्ली आया था। जहां तक नीरज का संबंध है, संहिता की धारा 313 के अंतर्गत उसका बयान दर्ज करते समय 23.09.2000 को उन्हें गिरफ्तार किए जाने की परिस्थिति भी उसके सामने नहीं रखी गई। बल्कि सह-आरोपी संतोष की न्यायालय परिसर से गिरफ्तारी के बारे में उसे बताया गया। हालांकि, आश्चर्य की बात यह है कि संहिता की धारा 313 के तहत दोनों आरोपियों के बयान दर्ज करते समय, उनमें से किसी को भी किसी भी फंसाने वाली परिस्थिति का सामना नहीं करना पड़ा, जिससे पता चले कि उन्होंने गिरफ्तारी से बचने के लिए खुद को गुप्त रखा था। इसके अलावा, उस संबंध में अभियोजन पक्ष का एकमात्र साक्ष्य यह था कि उनका पता लगाने का प्रयास किया गया था और उस संबंध में, 20.09.2000 को उनके मूल स्थान (यानी इटावा में) का दौरा किया गया था, जहां वे नहीं पाए गए थे। लेकिन, दुर्भाग्यवश, यह बयान कि पुलिस ने 20.09.2000 को उनके मूल स्थान का दौरा किया था, संहिता की धारा 313 के तहत अपना बयान दर्ज करते समय दोनों अभियुक्तों में से किसी को भी नहीं बताया गया था। इन परिस्थितियों में, हमारे लिए निश्चितता की कोटि के साथ यह मानना मुश्किल है कि वे दोषी थे, इसलिए उन्होंने खुद को गुप्त किया। जहां तक संतोष द्वारा अपराध की जानकारी नहीं देने के अनुमान का सवाल है, उसके पक्ष में जो बात जाती है, वह यह है कि यह दिखाने के लिए कोई स्पष्ट साक्ष्य नहीं है कि वह

संबंधित समय पर अपार्टमेंट में मौजूद था। यहां तक कि अगर वह उस अपार्टमेंट का किरायेदार था, तो वह हमेशा ही कुछ दिनों के लिए कहीं और मौजूद हो सकता था। यहां, यह केवल कुछ घंटों की बात थी, क्योंकि हत्या 11.09.2000 की दोपहर और 12.09.2000 की सुबह के बीच हुई थी। शव 12.09.2000 को लगभग सुबह 10:40 बजे पाया गया था। एक बार जब शव मिल गया और पुलिस घटनास्थल पर पहुंच गई, तो प्रथम सूचना रिपोर्ट के बाद, भले ही संतोष दूर और निर्दोष था, आत्म-संरक्षण की उसकी प्रवृत्ति उस पर गिरफ्तारी से बचने के लिए हावी हो गई होगी जब तक कि बेहतर विद्वान अधिवक्ता उसे आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर नहीं करता। इस तरह का आचरण अपने आप में दोषी मन को प्रतिबिंबित नहीं करता है। ***मटरू उर्फ गिरीश चंद्र*** *बनाम* ***उत्तर प्रदेश राज्य*** में, इस न्यायालय ने कहा :-

> "19. ... केवल फरार होने से जरूरी नहीं कि दोषी दिमाग का ठोस निष्कर्ष निकले। यहां तक कि एक निर्दोष आदमी भी घबराहट महसूस कर सकता है और किसी गंभीर अपराध का गलत संदेह होने पर गिरफ्तारी से बचने की कोशिश कर सकता है, आत्मसंरक्षण की वृत्ति ऐसी ही होती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि फरार होने का कृत्य अन्य साक्ष्यों के साथ विचार किए जाने वाले साक्ष्य का प्रासंगिक टुकड़ा है, लेकिन इसका मूल्य हमेशा प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। आम तौर पर न्यायालय फरार होने के कार्य को अधिक महत्व देने के लिए अनिच्छुक होती हैं, और इसे दोषसिद्धि बनाए रखने के लिए साक्ष्य में एक बहुत छोटी वस्तु के रूप में मानती हैं। इसे परिस्थितिजन्य साक्ष्यों की श्रृंखला को पूरा करने में एक निर्णायक कड़ी के रूप में शायद ही माना जा सकता है, जिसमें अभियुक्त के अपराध के अलावा कोई अन्य उचित परिकल्पना स्वीकार नहीं की जानी चाहिए।"

इन परिस्थितियों में और उपरोक्त सभी कारणों से, हमें आत्मसमर्पण के उनके कार्य में कुछ दिनों की देरी के कारण दोनों अभियुक्तों के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने का कोई अच्छा कारण नहीं मिलता है।

<u>परिस्थितियां (च), (छ) (ज) और (झ) - प्रकटीकरण बयान, परिणामी खोजें और उनका अपराध से जुड़ाव।</u>

71. अभियोजन पक्ष के अनुसार 23.09.2000 को प्रकटीकरण और परिणामी खोजों/बरामदगी के संबंध में दोनों अभियुक्तों ने हत्या के समय उनके द्वारा पहने गए खून से सने कपड़ों और हमले के हथियार बरामद कराने का आश्वासन देते हुए खुलासे किए। लेकिन, निश्चित रूप से, इसके अनुसरण में कोई खोज नहीं की जा सकी। नतीजतन, दोनों निचले न्यायालयों ने 23.09.2000 को दिए गए प्रकटीकरण बयान को खारिज कर दिया। तथापि, अभियोजन पक्ष के अनुसार 25.09.2000 को प्रकटीकरण बयानों का एक और सेट दिया गया था। इसके अनुसरण में, नीरज की निशानदेही पर एक अस्पताल के पीछे झाड़ियों में रखा चाकू बरामद किया गया और संतोष @ भूरे की निशानदेही पर उसी इमारत की छत पर रखे खून से सने कपड़े बरामद किए गए। महत्वपूर्ण बात यह है कि दोनों आरोपियों ने इस तरह के खुलासे और उनके कहने पर बरामदगी से इनकार किया है। ध्यान देने योग्य है, संतोष @ भूरे और नीरज दोनों के प्रकटीकरण बयानों पर एसआई राजेश कुमार (अभि.सा. 15) ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए हैं। चाकू/खंजर के संबंध में फर्द मकबूजगी पर प्रितपाल सिंह (अभि.सा.13) और एसआई राजेश कुमार (अभि.सा.15) ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए हैं। जबकि, खून से सने कपड़ों की फर्द मकबूजगी पर राज कुमार (अभि.सा. 4) और एसआई राजेश कुमार (अभि.सा. 15) ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए हैं।

72. दिनांक 25.03.2000 को किए गए प्रकटीकरण के संबंध में अभि.सा.-15 एसआई राजेश कुमार का वक्तव्य आपराधिक अपील संख्या 576/2011 में अनुलग्नक "पी-1" के रूप में अभिलेख पर रखा गया है। इसके अवलोकन से पता चलता है कि 25.09.2000 को दोनों आरोपियों नामत संतोष @ भूरे और नीरज को तिलक नगर पुलिस स्टेशन की हवालात से बाहर निकाला गया था और निरीक्षक जेए.ल. मीणा (अभि.सा. 28) द्वारा उनसे पूछताछ की गई थी। पेपर बुक के पेज नंबर 53 पर अभि.सा.15 का बयान इस आशय का है कि आरोपी नीरज ने बताया था कि घटना के समय उसने जो कपड़े पहने थे, वे उसके द्वारा उस कमरे की छत पर रखे गए थे, जहां घटना हुई थी और वह उसे बरामद करा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि नीरज ने प्रकटीकरण किया था कि वह उस चाकू को बरामद करा सकता

है जिससे हत्या की गई थी। अभि.सा. 15 ने विशेष रूप से कहा कि उस खुलासे के बाद, संतोष @ भूरे का प्रकटीकरण बयान दर्ज किया गया था, जिन्होंने वही बात बताई थी जो आरोपी नीरज ने पहले ही अपने प्रकटीकरण बयान में प्रकटीकरण किया था। उसकी गवाही के दूसरे चरण में अभि.सा. 15 ने कहा कि आरोपी व्यक्तियों के प्रकटीकरण बयान 25.09.2000 को सुबह लगभग 10.30 बजे दर्ज किए गए थे। फिर उसने कहा कि दोनों आरोपियों के बयान अलग-अलग दर्ज किए गए थे, लेकिन उसे याद नहीं है कि पहले किसका बयान दर्ज किया गया था। उसकी गवाही के दूसरे चरण में अभि.सा. 15 ने कहा कि उन्होंने निरीक्षक जे.एल. मीणा (अभि.सा. 28) के निर्देश पर प्रकटीकरण बयान लिखे थे, लेकिन यह कारण नहीं बता सके कि निरीक्षक जे.एल. मीणा (अभि.सा. 28) द्वारा उक्त प्रकटीकरण बयान क्यों दर्ज नहीं किए गए थे।

73. कुछ इसी तरह की स्थिति में, ***लछमन सिंह व अन्य*** *बनाम* ***राज्य*** **में,** बचाव पक्ष की ओर से प्रस्तुत दलीलें इस प्रकार थीं :-

> "3. *अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने कई निर्णयों का हवाला दिया, जिसमें धारा 27 का अर्थ यह लगाया गया है कि यह केवल जानकारी है जो पहले दी जाती है जो स्वीकार्य है और एक बार अपराध के आरोपी व्यक्ति से प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप एक तथ्य का पता चल गया है, तो इसे किसी अन्य आरोपी व्यक्ति से प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप फिर से खोजे जाने के रूप में नहीं दिखाया जा सकता है। हमारे समक्ष यह आग्रह किया गया था कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने के लिए साक्ष्य जोड़ने के लिए बाध्य था कि तीन आरोपियों में से किसने पहले जानकारी दी। तीनों आरोपियों के बयान दर्ज करने वाले हेड कांस्टेबल ने यह नहीं बताया है कि उनमें से किसने उन्हें पहले जानकारी दी, लेकिन बरामदगी ज्ञापन को सत्यापित करने वाले गवाहों में से एक बहादुर सिंह से विशेष रूप से इसके बारे में जिरह में पूछा गया और उसने कहा : "मैं यह नहीं कह सकता कि पहले किससे सूचना*

मिली।" इन परिस्थितियों में, यह तर्क दिया गया था कि चूंकि यह पता नहीं लगाया जा सकता है कि किस आरोपी ने पहले जानकारी दी थी, इसलिए किसी भी आरोपी व्यक्ति के खिलाफ कथित खोजों को साबित नहीं किया जा सकता है।"

उपरोक्त तर्कों के संदर्भ में, इस न्यायालय ने सावधानी की एक टिप्पणी व्यक्त करते हुए जो कहा वह इस प्रकार है :-

"14. हमें ऐसा लगता है कि यदि अभियोजन पक्ष द्वारा दिए गए साक्ष्य संदेहयुक्त पाए जाते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि पुलिस ने जानबूझकर विभिन्न आरोपियों को खोजे गए तथ्यों से संबंधित समान इकबालिया बयानों के लिए जिम्मेदार ठहराया है, ताकि उन सभी के खिलाफ साक्ष्य बनाए जा सकें, यह मामला निस्संदेह सबसे सतर्क दृष्टिकोण की मांग करता है। ..."

(जोर दिया गया)

74. उस रोशनी में देखें तो अभि.सा.15 के बयान से एक भ्रामक तस्वीर उभरकर सामने आती है, यानी क्या नीरज ने ही सबसे पहले उस जगह का प्रकटीकरण किया था, जहां से खून से सने कपड़े बरामद हुए थे या फिर संतोष ने ही सबसे पहले इसका प्रकटीकरण किया था। अभियोजन पक्ष के लिए सबसे हानिकारक बात अभि.सा. 15 का बयान है कि उसने निरीक्षक जे.एल. मीणा (अभि.सा. 28) के निर्देश पर खुलासे के बयान लिखे, न कि इस आधार पर कि उन्होंने आरोपियों ने जो कहा। हमारे विचार में, यह दोनों अभियुक्तों के खिलाफ इसका उपयोग करने के लिए प्रकटीकरण साक्ष्य को गढ़े जाने की गंभीर संभावना पैदा करता है जो इसकी विश्वसनीयता को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचाता है जिससे यह स्वीकृति के योग्य नहीं है। इससे भी अधिक, जब पहले प्रकटीकरण के परिणामस्वरूप कोई खोज नहीं हुई थी।

75. जहां तक आरोपियों की निशानदेही पर बरामदगी का सवाल है, दोनों आरोपियों ने अपनी निशानदेही पर संबंधित वस्तुओं की बरामदगी से इनकार किया है। जहां तक संतोष की निशानदेही पर कपड़ों की बरामदगी का संबंध है, उस बरामदगी के गवाह अभि.सा. 4 को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है। इस प्रकार किसी भी सार्वजनिक गवाह से उस बरामदगी के लिए कोई समर्थन नहीं है। और चूंकि हमने पहले ही पुलिस गवाहों द्वारा दिए गए प्रकटीकरण बयानों पर संदेह किया है, इसलिए उनके द्वारा बरामद की गई बरामदगी के संबंध में उनकी गवाही पर भरोसा करना असुरक्षित होगा, विशेष रूप से, जब जिस स्थान से कपड़ों की बरामदगी दिखाई गई है, वह इमारत की छत के अलावा और कोई नहीं है जहां से 13 दिन पहले मृतक का शव मिला था। क्योंकि, ऐसे परिदृश्य में, यह उम्मीद करना तर्कसंगत होगा कि पुलिस ने उस इमारत के किसी भी नुक्कड़ और कोने को बिना जांच किए नहीं छोड़ा होगा। उपरोक्त सभी कारणों से, हम संतोष के कहने पर कपड़ों की बरामदगी पर संदेह करते हैं और इस तरह उसके कहने पर कपड़ों की बरामदगी की स्थिति को खारिज करते हैं।

76. संतोष की निशानदेही पर कपड़ों की बरामदगी पर संदेह करने के बाद, यह परिस्थिति कि कपड़ों में मृतक के समान समूह का खून था, अर्थहीन हो जाता है क्योंकि कपड़ों को दोनों आरोपियों के साथ जोड़ने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है। पुलिस को दिया गया प्रकटीकरण बयान, भले ही खारिज न किया गया हो, वह यह साबित करने के लिए स्वीकार्य नहीं था कि बरामद किए गए कपड़े वही थे जो आरोपियों ने हत्या के समय पहने थे। इसका कारण यह है कि आईईए, 1872 की धारा 27 के तहत केवल इतना ही प्रकटीकरण स्वीकार्य होगा, जो प्रत्यक्ष रूप से उसके कारण प्रकट हुए तथ्य से संबंधित है जो इस मामले में, वह स्थान होगा, जहां कपड़े छिपाए गए थे।

77. ***पुलुकुरी कोट्टाया और अन्य*** *बनाम* ***सम्राट*** **में,** प्रिवी काउंसिल ने आईईए, 1872 की धारा 27 के तहत आरोपी द्वारा पुलिस को प्रदान की गई प्रकटीकरण जानकारी की स्वीकार्यता की हद पर चर्चा करते हुए कहा कि :-

> *"धारा के भीतर 'खोजे गए तथ्य' को पेश की गई वस्तु के बराबर मानना गलत है; खोजे गए तथ्य में उस स्थान जहां से वस्तु को पेश किया जाता है और इस बारे में अभियुक्त*

का ज्ञान को शामिल किया गया है, और दी गई जानकारी इस तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित होनी चाहिए। ***पेश की गई वस्तु के पिछले उपयोगकर्ता, या पिछले इतिहास के बारे में जानकारी उस परिस्थिति में इसकी खोज से संबंधित नहीं है जिसमें इसे खोजा गया है।*** *हिरासत में एक व्यक्ति द्वारा प्रदान की गई जानकारी कि 'मैं अपने घर की छत में छिपाकर रखा गया चाकू पेश करूंगा' चाकू की खोज का कारण नहीं बनता है; चाकू की खोज कई साल पहले हुई थी। यह इस तथ्य की खोज की ओर जाता है कि सूचना देने वाले के घर में एक चाकू छुपाया जाता है, और यदि अपराध के लिए चाकू का उपयोग किया जाना साबित होता है, तो पाया गया तथ्य बहुत प्रासंगिक है। लेकिन अगर बयान में 'जिसे मैंने ए को घोंपा' शब्द जोड़े जाते हैं, तो ये शब्द अस्वीकार्य हैं क्योंकि वे सूचना देने वाले के घर में चाकू की खोज से संबंधित नहीं हैं।*

(जोर दिया गया)

78. ***के. चिन्नास्वामी रेड्डी*** *बनाम* ***आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य*** **में,** इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने प्रिवी काउंसिल द्वारा ***पुलुकुरी कोट्टाया (पूर्वोक्त)*** में, व्यक्त किए गए विचार से सहमति व्यक्त करते हुए निम्नलिखित शब्दों में कानून को स्पष्ट किया :-

"10. *... यह केवल वह हिस्सा है जो विशिष्ट रूप से उस खोज से संबंधित है जो स्वीकार्य है; लेकिन अगर बयान का कोई हिस्सा स्पष्ट रूप से खोज से संबंधित है, तो यह पूर्ण रूप में स्वीकार्य होगा और न्यायालय यह नहीं कह सकता है कि यह बयान के एक हिस्से को काट देगा क्योंकि यह इकबालिया प्रकृति का है। धारा 27 बयान के उस हिस्से को जो स्पष्ट रूप से खोज से संबंधित है समग्र*

रूप से स्वीकार्य बनाती है, चाहे वह स्वीकारोक्ति की प्रकृति में हो या नहीं। ..."

79. ***मौ. इनायतुल्लाह बनाम महाराष्ट्र राज्य*** में, प्रिवी काउंसिल के ***पुलुकुरी कोट्टाया (पूर्वोक्त)*** में निर्णय के बाद इस न्यायालय ने आईईए, 1872 की धारा 27 के तहत आरोपी द्वारा पुलिस को प्रदान की गई प्रकटीकरण जानकारी किस हद तक स्वीकार्य है, इस संबंध में कानून को विस्तृत रूप से निर्धारित किया। निर्णय का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया है :-

"12.... *केवल "इतनी ही जानकारी" जो स्पष्ट रूप से उसके कारण खोजे गए तथ्य से संबंधित है स्वीकार्य है। बाकी जानकारी को बाहर रखा जाना चाहिए। शब्द "स्पष्ट रूप से" का अर्थ है "सीधे", "निर्विवाद रूप से", "सख्ती से", "अचूक रूप से"। इस शब्द का उपयोग विचार करके साबित की जा सकने वाली जानकारी के दायरे को सीमित करने और परिभाषित करने के लिए किया गया है। वाक्यांश "स्पष्ट रूप से इस प्रकार खोजे गए तथ्य से संबंधित है" प्रावधान का आधार है। यह वाक्यांश अभियुक्त द्वारा प्रदान की गई जानकारी के उस हिस्से को संदर्भित करता है जो खोज का प्रत्यक्ष और तत्काल कारण है। प्रतिबंध को आंशिक रूप से हटाने के पीछे का कारण पुलिस को दिए गए कबूलनामे और बयानों के विपरीत, यह है कि यदि कोई तथ्य वास्तव में अभियुक्त द्वारा दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप खोजा जाता है, तो यह उस हिस्से की सच्चाई का कुछ आश्वासन देता है, और केवल उसी हिस्से की, जानकारी का जो खोज का स्पष्ट, तत्काल और निकट कारण थी। ऐसी कोई सुनिश्चितता या आश्वासन बाकी बयान से जुड़ी नहीं है जो अप्रत्यक्ष या दूरस्थ रूप से खोजे गए तथ्य से संबंधित हो सकती है।*

धारा 27 के तहत प्रकटीकरण बयान किस हद तक स्वीकार्य है, यह निर्धारित करने के बाद, न्यायालय निम्नलिखित कथन की स्वीकार्यता का परीक्षण करने के लिए आगे बढ़ा:

> *"उन्होंने कहा, 'मैं उन तीन रासायनिक ड्रमों के जमा होने की जगह बताऊंगा जो मैंने हाजी बंदर से 1 अगस्त को निकाले थे।।*
>
> न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :-
>
> *" ... कथन का केवल पहला भाग अर्थात् "मैं तीन रासायनिक ड्रमों के जमा होने की जगह बताऊंगा" खोजे गए तथ्य का तत्काल और प्रत्यक्ष कारण था। इसलिए, केवल यह भाग धारा 27 के तहत स्वीकार्य था। शेष कथन, अर्थात्, "जो मैंने 1 अगस्त को हाजी बंदर से निकाला था", केवल ड्रमों के पिछले इतिहास या आरोपियों द्वारा उनकी चोरी का था; यह खोज का विशिष्ट और अनुमानित कारण नहीं था और इसे पूरी तरह से साक्ष्य से खारिज किया जाना था।"*

80. उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, भले ही प्रकटीकरण बयानों को स्वीकार कर लिया गया हो, उसमें यह बयान कि दो पतलूनों में से एक संतोष की थी और दूसरी सह-आरोपी नीरज की थी, जिसे उन्होंने घटना के समय पहना था, ऐसा नहीं है जो स्पष्ट रूप से खोजे गए तथ्य से संबंधित है, इसलिए, यह आईईए, 1872 की धारा 27 के तहत स्वीकार्य नहीं था। .

81. जहां तक नीरज की निशानदेही पर चाकू बरामद होने की बात है, नीरज ने इससे इनकार किया है और इसका समर्थन करने के लिए कोई स्वतंत्र गवाह नहीं है, जहां तक अभि.सा. 13, जिसे सार्वजनिक गवाह के रूप में पेश किया गया है, एक विशेष पुलिस अधिकारी निकला और जहां तक अन्य पुलिस गवाहों का संबंध है, हमने पहले ही प्रकटीकरण करने वाले बयान स्थापित करने में उनके आचरण पर संदेह किया है। इसके अलावा, जिस स्थान से बरामदगी की जाती है, वह सभी के

लिए सुलभ है। अन्यथा भी, इसका अपराध में फंसाने हेतु मूल्य बेहद सीमित है क्योंकि, सबसे पहले, अपराध के साथ चाकू को जोड़ने वाला कोई फोरेंसिक साक्ष्य नहीं है; दूसरे, चाकू एक आम चाकू है जो आसानी से उपलब्ध हो सकता है; तीसरा, मृतक के शरीर पर पाए गए घाव अलग-अलग आयामों के थे जो एक से अधिक हथियारों के उपयोग की संभावना को जन्म देते थे; और चौथी बात यह है कि बरामदगी की पूरी कवायद हमारे आत्मविश्वास को प्रेरित नहीं करती है, विशेष रूप से, क्योंकि बरामदगी करने का पहला प्रयास विफल हो गया था।

82. उपरोक्त सभी कारणों के लिए, हम मानते हैं कि प्रकटीकरण बयान देने और उसकी परिणामी खोजों / बरामदगी के संबंध में परिस्थितियां उचित संदेह से परे साबित नहीं हुई थीं। हमारे विचार में, दोनों निचले न्यायालयों ने साक्ष्यों की उचित रूप से विवेचना और जांच नहीं की है, विशेष रूप से अभि.सा. 15 की गवाही, जैसा कि ऊपर देखा और विश्लेषण किया गया है, यह जांचने के लिए कि क्या उक्त परिस्थितियां उचित संदेह से परे साबित हुई थीं। इसलिए, दोनों निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए विपरीत निष्कर्षों को रद्द कर दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप, बरामद किए गए कपड़ों पर मानव रक्त की उपस्थिति के संबंध में फोरेंसिक रिपोर्ट का दोनों आरोपियों के लिए कोई अपराध में फंसाने हेतु मूल्य नहीं है। इसी तरह, यह राय कि बरामद चाकू से वे चोटें हो सकती हैं जो मृतक के शरीर पर पाई गईं थीं, आरोपियों के लिए इसका अपराध में फंसाने हेतु कोई मूल्य नहीं है।

83.

<u>परिस्थिति (ञ) - संभाव्य स्पष्टिकरण प्रस्तुत करने में विफलता</u>

84. परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित मामले में, गलत स्पष्टीकरण या गैर-स्पष्टीकरण का उपयोग केवल एक अतिरिक्त परिस्थिति के रूप में किया जा सकता है जब अभियोजन पक्ष ने आरोपी के अपराध के संबंध में एक निश्चित निष्कर्ष तक पहुंचने वाली परिस्थितियों की श्रृंखला को साबित कर दिया हो। इसलिए, परिस्थिति को संबोधित करने से पूर्व (ञ), हम पहले जांच करेंगे कि क्या साबित हुई फंसाने वाली परिस्थितियां इस हद तक पूर्ण श्रृंख्ला का निर्माण करती हैं जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह आरोपी था जिसने अपराध किया था।

85. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, संतोष के खिलाफ जो फंसाने वाली परिस्थिति जो उचित संदेह से परे साबित हुई खड़ी थी, वह यह थी कि मृतक की मौत उस फ्लैट / अपार्टमेंट में हुई थी, जो उसकी किरायेदारी में था। जहां तक नीरज का सवाल है, संतोष या मृतक के साथ उसे जोड़ने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है। यह दिखाने के लिए भी कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि नीरज उस अपार्टमेंट में सह-किरायेदार या उप-किरायेदार के रूप में रहता था। यह आरोप कि नीरज द्वारा आत्महत्या का पत्र लिखा गया पहले ही उचित संदेह से परे साबित नहीं हुआ है, इसलिए, हमारे विचार में, नीरज के खिलाफ कोई सार्थक साक्ष्य नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा उसे बरी किए जाने में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

86. जहां तक संतोष का सवाल है, उस अपार्टमेंट की किरायेदारी को छोड़कर बाकी परिस्थितियां जिन पर अभियोजन पक्ष ने भरोसा किया है, वे उचित संदेह से परे साबित नहीं हुई हैं। हमारे विचार में, उस अपार्टमेंट की किरायेदारी संतोष के पास होने से इस हद तक एक श्रृंखला पूरी नहीं होगी, जिससे तार्किक रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं में मृतक को संतोष द्वारा मारा गया था और किसी और के द्वारा नहीं, क्योंकि -

क) जिस आवास से शव बरामद किया गया था, वह खुला हुआ मिला था। इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि यह संतोष के ताले और चाबी के अंतर्गत था या इसकी पहुंच को नियंत्रित किया गया था और संतोष के अलावा किसी और की अपार्टमेंट तक पहुंच नहीं हो सकती थी। इस प्रकार, किसी तीसरे व्यक्ति के अपार्टमेंट में प्रवेश करने और हत्या करने की संभावना से इनकार नहीं किया जाता है।

ख) एक अपार्टमेंट में केवल एक शव की उपस्थिति उस अपार्टमेंट के किरायेदार या मालिक को हत्या के लिए दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है, खासकर जब यह साबित करने के लिए कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि हत्या के संभावित समय के आसपास आरोपी वहां

मौजूद था, या आखिरी बार मृतक के साथ देखा गया था, और मृतक को खत्म करना उसका मकसद था;

ग) अभि.सा.4 की गवाही से यह साबित होता है कि मृतक 11.09.2000 को दोपहर और अपराह्न 1.00 बजे के बीच उस अपार्टमेंट में अकेला था और उस समय संतोष वहां उपस्थित नहीं था। मृतक का शव 12.09.2000 को सुबह मिला। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि 11.09.2000 को दोपहर और अगले दिन सुबह शव का पता चलने के बीच, अपीलकर्ता संतोष या सह-अभियुक्त नीरज ने उस अपार्टमेंट में प्रवेश किया या उन्हेंआसपास के क्षेत्र में देखा गया;

घ) अभियोजन पक्ष ने अपराध के लिए किसी भी मकसद को साबित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया, जो परिस्थितिजन्य साक्ष्यों पर आधारित मामले में, परिस्थितियों की श्रृंखला के लिए एक महत्वपूर्ण कड़ी प्रदान करता है;

ङ) अपार्टमेंट से शव को उठाने के समय व्हिस्की की बोतल और प्लेटों आदि सहित वहां कई वस्तुएं उठाई गईं। उन वस्तुओं में से कई पर उंगलियों के निशान हो सकते थे। फिर भी आरोपियों के अलावा किसी अन्य व्यक्ति की उपस्थिति को खारिज करने या उन वस्तुओं पर दोनों आरोपियों में से किसी के फिंगरप्रिंट की उपस्थिति की पुष्टि करने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं लाया गया;

च) यह स्थिति कि अभियुक्त 23.09.2000 तक फरार रहा, अपने आप में एक दोषी दिमाग को प्रतिबिंबित करने वाला आचरण नहीं है, खासकर, जब यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य मौजूद नहीं था कि 11-09-2000 या उसके बाद किसी भी

समय, 12-09-2000 को शव की बरामदगी तक अपीलकर्ता संतोष अपार्टमेंट में, या आसपास के क्षेत्र में शारीरिक रूप से उपस्थिति था। अन्यथा भी, संहिता की धारा 313 के तहत उनका बयान दर्ज कराते समय फरारी के संबंध में कोई फंसाने वाली परिस्थिति, यदि कोई है तो, को दोनों में से किसी के सामने नहीं रखा गया है।

<u>निष्कर्ष</u> :-

86. उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि अभियोजन पक्ष फंसाने वाली परिस्थितियों की एक श्रृंखला को साबित करने में विफल रहा है जिससे निर्णायक रूप से यह इंगित किया जा सके कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह दोनों आरोपी या उनमें से कोई एक था, और कोई और नहीं था, जिसने हत्या की थी। ऐसी परिस्थितियों में, भले ही संतोष यह बताने में विफल रहे कि मृतक का शव उसके अपार्टमेंट में कैसे मिला, उनकी दोषसिद्धि का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। संक्षेप में, यह एक ऐसा मामला है जहां अभियोजन पक्ष अपने मामले को "सच हो सकता है" के दायरे से "सच है" के स्तर तक बढ़ाने में विफल रहा, जैसा कि आपराधिक आरोप पर दोषसिद्धि के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

87. नतीजतन, आरोपी संतोष @ भूरे द्वारा दायर आपराधिक अपील संख्या 575/2011 को स्वीकार किया जाता है। उसे दोषी ठहराने और सजा सुनाने वाले विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश और उसकी दोषसिद्धि को बरकरार रखने वाले उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश को रद्द किया जाता है। अपीलकर्ता संतोष @ भूरे को उन सभी आरोपों से बरी किया जाता है जिनके लिए उस पर मुकदमा चलाया गया है और उसे दोषी ठहराया गया है। यदि वह हिरासत में है, तो उसे तुरंत रिहा कर दिया जाए, जब तक कि किसी अन्य मामले के संबंध में उसकी हिरासत की आवश्यकता न हो यदि वह पहले से ही जमानत पर है, तो उसे आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है और उसके जमानतपत्र को अदा कर दिया जाए।

जहां तक आरोपी नीरज को बरी किए जाने को चुनौती देने वाली राज्य द्वारा दायर की गई आपराधिक अपील संख्या 576/2011 का संबंध है, इसमें कोई दम नहीं है और तदनुसार, इसे खारिज किया जाता है।

88. दोनों अपीलों का निपटान पूर्वोक्त शर्तों में किया जाता है।

अंकित ज्ञान अपीलों का निपटान किया गया।
(सहायक : मनीष तोमर और महेंद्र यादव, एलसीआरए)

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*

Disclaimer: *The translated judgment in vernacular language is meant for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purpose for all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.*